Chapter-2

द्वितीय परिच्छेद

खण्ड–अ

क – कबीर के समय की राजनीतिक स्थिति

कबीर के प्रादुर्भाव से पूर्व भारत पर अरबों के अनेक आक्रमण हुए । कबीर के आविर्भाव का समय राजनीतिक उथल–पुथल का युग है । उनका समय ई. स. 1398 से 1518 के मध्य का निश्चित किया गया है । उनके साहित्य का संबंध हिन्दी साहित्य के भक्ति काल के प्रथम चरण से माना जाता है । यह समय राजनीतिक संघर्षों से भरा हुआ था । परदेशी आक्रमणखोरों के हमलों के कारण देश की राजनीतिक व्यवस्था खास करके समूचे उत्तर भारत की स्थिति बहुत ही अस्त व्यस्त हो गयी थी । अत्याचार , लूटमार , तोड़फोड़ की घटनाएँ बहुत ही बड़े व्यापक पैमाने पर लगातार चलती रही । अराजकता से प्रजा त्रस्त थी हिन्दू धर्म और संस्कृति के मूलाधार को नष्ट करने में मुस्लिम शासकों के लगातार प्रयास और हिन्दू राजाओं की आपसी वैरवृति एकता और दीर्घ दृष्टि के अभाव के कारण हिन्दू समाज बहुत कमजोर और शिथिल बन गया था । परदेशी आक्रमणकारियों की असहिष्णुता और धार्मिक कट्टरता के कारण हिन्दुओं के पवित्र स्थानों की व्यापक पैमाने पर तोड़फोड़ की गयी । देश में कोई शक्तिशाली शासक न होने के कारण ये आक्रमणकारी उत्तर भारत के सारे प्रदेश में सामाजिक आशान्ति का वातावरण फैला रहे थे । यह राजनीतिक संघर्ष का मुख्य कारण मुस्लिम धर्म का प्रचार एवं भारत की संपत्ति और वैभव को नष्ट करना था ।

रामधारी सिंह दिनकर ' का मत है कि – " भारत में इस्लाम का

आरम्भिक इतिहास मार फाड़ , खूंरेजी , धर्म–परिवर्तन , अभद्रता और अन्याय का इतिहास है ।' मुसलमान एक आदर्श , एक धर्म , और एक सुगठित समाज में जिस प्रकार आबद्ध थे , उसमें उन्हें अपार नैतिक बल प्राप्त होता था । इसके विपरीत हिन्दुत्व ढीला हो चुका था । हिन्दुओं के धर्म , आदर्श और सिद्धान्त के अनेक रुप थे । उन्हें एकता का बल नहीं था ।" 1:–

कबीर के समय तुगलक वंश एवं सैयद वंश का शासन रहा। तुलग एवं सैयद वंश का समय क्रमशः 1320 ई. से 1399 ई. , और 1414 ई. से 1450 ई. तक का है ।

मुहम्मद तुगलक (1325 से 1353 ई.) के समय की परिस्थिति के बारे में आशीर्वादलाल श्रीवास्तव ने कहा है कि – मुहम्मद तुगलक की राजधानी परिवर्तन, ताम्र सिक्कों के प्रचलन एवं फारस विजय की निष्फल याजनाओं से जनता इतनी पीड़ित हुई थी कि उसके शासन के प्रथम दस वर्षों के बाद ही समग्र देश में दंगे भड़क उठे थे । परिणाम स्वरुप दक्षिण मेवाड़ एवं बंगाल में स्वतंत्र राज्यों की स्थापना हुई । इस तरह मुहम्मद तुगलक के दुर्बल शासन के कारण हिन्दू राज्यों को संगठित और शक्ति संपन्न होने का एक बार फिर मौका मिला । 2–

फिरोज तुगलक का समय 1351 से 1388 ई. तक का हे । उसने इस्लाम धर्म के प्रचार हेतु अनगिनत हिन्दुओं को मौत के घाट उतारा था । और यह उसका नित्यक्रम हो गया था । उसने अपने शासनकाल में मन्दिरों को भ्रष्ट किया था उसके स्थान पर मस्जिदों का निर्माण किया था । तैमूर ने सन् 1368 ई. में आक्रमण किया । डॉ. के. सी. व्यास एवं सर देसाई ने इस स्थिति का उल्लेख करते हुए कहा है कि – " तैमूर का आक्रमण होते हुए भी प्रलय के समान विनाश कारी था । जिसके परिणाम स्वरुप उत्पन्न हुई अराजकता की

1:– संस्कृति के चार अध्याय, पृ.– 361

2:– आर्शीवाद लाल श्रीवास्तव : दि सल्तनत आफ दिल्ली, पृ.– 197–200 तथा 174–80

स्थिति का लगभग पन्द्रह साल तक रही । इस अराजकता की स्थिति का लाभ लेकर छोट –छोटे सभी राज्य स्वयं को स्वतंत्र घोषित करने को प्रेरित हुए । 1–

सैयद –वंश का समय सन् 1414 से 1451 ई. तक का है । सैयद –वंश के इस थोड़े से शासन काल में चार सुल्तान गद्दी पर बैठे । लेकिन इनमें से कोई शासक शक्ति शाली नहीं था ।

सारांश यह है कि कबीर के समय की राजनीतिक स्थिति परमुखपेक्षी , परवशतापूर्ण एवं विपन्न थी । मुस्लिम शासकों का प्रधान उद्देश्य हिन्दू समाज की आधारशिला जैसे हिन्दू धर्म और संस्कृति को नष्ट करके पूरे हिन्दू समाज का इस्लामीकरण करना था इन इस्लामी आक्रमणों ने हिन्दू समाज के समृद्ध , संपन्न एवं शान्त जीवन को इस तरह से क्षति पहुँचाई है , जिसको सँवारने का कार्य सदियों तक चलता रहेगा , फिर भी इस क्षति को सम्पूर्ण रुप से दूर करना एक स्वप्न ही रह जायेगा ।

ऐसी दुरावस्था में हिन्दू समाज का टिकना मुश्किल था । फिर भी भारत के महान संतों के जन –जागरण के कारण सामाजिक , धार्मिक अभियानों के कारण आज भारत अपना अस्तित्व टिकाए हुए हैं ।

1:– डॉ. के. सी. व्यास एवं सर देसाई, पृ. 181–182 दि सल्तनत आफ़ दिल्ली ।

ख – कबीर के समय की धार्मिक स्थिति

अन्य परिस्थितयों की भाँति तत्कालीन धार्मिक परिस्थति भी विषम थीं । इस समय जो विदेशी आक्रमण हुए , उनसे पीड़ित होकर असंख्य हिन्दुओं ने मुस्लिम धर्म को अंगीकार कर लिया था । इस्लाम धर्म का प्रचार उन दिनों दो प्रकार से किया जा रहा था । एक तो तलवार के ज़ोर पर और दूसरे सूफ़ी फकीरों के द्वारा प्रेमोपदेश से ।

हिन्दू धर्म की स्थिति मुस्लिम आक्रमणों के कारण अराजकतापूर्ण थीं । तत्कालीन समाज में अनेक छोटे मोटे सम्प्रदाय प्रस्थापित हो चुके थे । इनमें बौद्व , जैन ,वैष्णव , सूफी , शाक्त , गाणपत्य प्रमुख थे । शासकों की असहिष्णुता के कारण धार्मिक और आध्यत्मिक प्रवृत्तियों में गिरावट आ गयी । हिन्दू धर्म की उच्च आध्यात्मिक परंपराओं में साम्प्रदायिक संकीर्णताएँ आ गयी । धर्म ग्रन्थों के सार तत्व को समझकर इसका अनुसरण करने के बजाय तत्कालीन समाज कर्मकाण्ड , बाह्याडम्बर , मिथ्याचार आदि में उलझ गया था । सभी सम्प्रदायवाले आपसी वैर वैषम्य एवं अहंकार के वशीभूत होकर ' अपना धर्म ही सर्वोच्च है ' –मानकर चलते थे । वैष्णव आदि सम्प्रदायों में जातिवाद ,छुआछूत आदि का बोलबाला था । शूद्रों के लिए मन्दिरों में कोई स्थान न था । वे धार्मिक पुस्तकें पढ़ नहीं सकते थे ।

अतः हम कह सकते है कि धार्मिक दृष्टि से कबीर का युग मिथ्याडम्बरों , बाह्याचारों एवं अन्धविश्वासों का युग था ।

गः– कबीर के समय की सामाजिक स्थितिः:–

राजनीतिक परिस्थिति के विश्रृंखल होने के कारण तत्कालीन भारतीय सामाजिक परिस्थिति में भी उच्छृंखलता आ गई । समाज के सभी वर्गों की नैतिकता का पतन हो गया था । उस समय समाज में एकता का अभाव था ।

मुसलमान वर्ग अपने को शक्तिशाली एवं कट्टरधर्मी मानता था । मुसनमानी शासक प्रजा का शोषण करके विलासिता का जीवन व्यतीत करते थे । जो जन्म से मुस्लिम हो या तो मुस्लिम धर्म अंगिकार करे उन्हें ही राजनीतिक संरक्षण प्राप्त हो सकता था । अतः हिन्दुओं की स्थिति दयनीय थीं ।

डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव तत्कालीन समाज का चित्रण करते हुए कहते हैं कि – " मुसलमान शासकों के धर्मान्ध हाने के कारण और उनकी धार्मिक कट्टरता के कारण हिन्दू भी मन ही मन उन्हें नीच , तुच्छ , पतित एवं अधम समझते थे । वे मुसलमानों के हाथ का छुआ हुआ अन्न नहीं खाते थे , उन्हें अपवित्र समझते थे । इसलिए उनके लिए म्लेच्छ शब्द का प्रयोग करते थे ।"1–

हिन्दू का समाज ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , और शूद्र आदि चार वर्गों में विभक्त था । ब्राह्मण वर्ग अपने को अन्य वर्गों से श्रेष्ठ एवं हिन्दू धर्म का अधिष्ठाता समझता था। ब्राह्मण वर्ग अनेक प्रकार के वाह्याडम्बर , बहुदेवोपासना , मूर्तिपूजा , आदि में संलग्न था । शूद्रों की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी । उन्हें समाज में कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे । मंदिरों में वे प्रवेश नहीं कर सकते थे , धर्मग्रन्थों के अध्ययन का अधिकार भी उन्हें नहीं था ।

रामचरण शर्मा इस स्थिति का वर्णन करते हुए कहतें हैं कि – " हिन्दू जन समाज किसी निश्चित स्थिति में नहीं था । जाति– पाँति , हिंसा , अशिक्षा , भेदभाव , अन्ध विश्वास , रुढ़ि – ग्रस्तता आदि दुष्प्रवृत्तियों के कारण हिन्दू समाज का नैतिक एवं मानसिक एवं सांस्कृतिक ह्रास हो रहा था । हिन्दू समाज के समान ही मुस्लिम समाज के अर्न्तगत अनेक प्रकार की कुप्रवृत्तियॉ घर कर चुकी थीं । स्वेच्छाचारी ,विलासी शासक और उसके अधीनस्थ उच्च राज्य कर्मचारी विलासी , दुराचारी एवं आचारभ्रष्ट हो चुके थे ।

1:– डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव , सल्तनत आंफ देहली, पृ. 488

खण्ड – ब

क– दादू दयाल के समय की राजनीतिक स्थिति

दादू का समय सं. 1601 (सन् 1544 ई.) से सं. 1660 (सन् 1603) तक का अधिकतर विद्वानों ने स्वीकारा है । अतः गोस्वामी तुलसीदास (सं. 1586–1680) तथा पृथ्वीराज राठोड़ (सं. 1606 –1657) और सनत लालदास (सं. 1597 –1705) के दादू समकालीन थे ।

सम्राट अकबर (सं. 1599 –1662) एवं महाराजा प्रताप (सं. 1597 – 1654) दादू के समकालीन शासक थे । कहा जाता है कि बादशाह अकबर से दादू की भेंट हुई थी । 1– उनकी यह भेंट सं. 1643 में सीकरी में हुई थी । संत रज्जब ने इस घटना का उल्लेख किया है –

अकबर साहि बुलाइया , गुरु दादू को आप ।
साँच झूँठ व्योरो हुओ , तब रह्यो नाम परताप ।। 2–

अकबर दादू के आश्चर्यजनक , गरिमामय व्यक्तित्व से अत्यन्त प्रभावित हुआ था ।

अकबर के शासन काल में हिन्दुस्तान में मुगल साम्राज्य स्थापित हो चुका था । मुस्लिम शासकों की अपेक्षा अकबर की नीति सहिष्णु और उदार थी । अकबर ने हिन्दुओं को योग्यता के आधार पर ऊँचे ओहदों पर बिठाया था। अकबर के इस कार्य के पीछे भी उसका अपना निजी स्वार्थ छिपा था । वे अपने शासन की दृढ़ता के लिए राजपुतों की सहायता चाहता था । लेकिन फिर भी अन्य मुस्लिम शासकों की अपेक्षा अकबर ने अपने शासन के समय लोककल्याण को ध्यान में रखा ।

1:– दादू दयाल, पृ.–2, सं., परशुराम चतुर्वेदी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, सं. 2023 वि.

2:– सर्वांगी पीढ़ी, पृ. 25

शासन की बागडोर मुगलों के हाथ आ जाने से हिन्दू राजाओं के आपसी संघर्ष कम होते गये । मुगल राजा और उनके अधीनस्थ राजाओं का जीवन विलासी हो गया । उनकी इस विलासीवृत्ति के पोषण के लिए सामान्य जनता का ही शोषण किया जाता था । प्रजा की उन्नति की और राजा ने ध्यान ही न दिया । मुगल शासकों का लक्ष्य लोक हित न होकर हिन्दू– राजा महाराजाओं को पराजित करना एवं अपने साम्राज्य का विस्तार करना तथा हिन्दूओं को बलात् मुस्लिम धर्म अंगिकार करवाना था । यदि दादू की राजनीतिक परिस्थितियों का आकलन करें तो सबसे बड़ी बात यह उभरकर आती है – " राजा और प्रजा के बीच ऊँच–नीच की भावना अकबर के देहान्त के बाद न केवल गुजरात की दशा अपितु संपूर्ण देश की स्थिति बिगड़ गई । देश में अनेक साम्प्रदायिक दंगे होने लगे । मुगल शासकों में भी आपसी कलह रहते थे ।

संक्षेप में शासन की लालसा के कारण दादू के युग में अनेक राजनीतिक परिवर्तन हुए । प्रजा पराधीन और त्रस्त थी ।

ख– दादू दयाल के समय की धार्मिक स्थिति

कबीर के समय जो धार्मिक स्थिति थी वही स्थिति दादू के समय में भी रही । अतः अधिक विस्तार से स्पष्ट करना आवश्यक नहीं है ।

दादू के समय भी मुगल शासन का अधिपत्य था , और मुगल सुलतानों का ध्येय समस्त हिन्दू धर्मागों को तोड़कर इस्लाम धर्म की स्थापना करना था । वैसे सन् 1586 ई. में अकबर ने दादू के साथ चालीस दिनों तक धर्म के विषय पर बातचीत की थी तब दादू की गहरी अनुभूति से भरे सत्य के प्रतिपादन से अकबर बहुत प्रभावित हुआ था । और वह अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णु बन गया था, और इसी के फल स्वरुप इस प्रसिद्ध मुगल बादशाह ने सिक्कों से अपना नाम हटवाकर एक तरफ ' जल्ला–जुलालुहु' उस परमात्मा की महिमा बनी रहे और दूसरी तरफ ' अल्लाहु अकबर' परमात्मा महान है लिखवाया । 1–

हिन्दू धर्म में भी अनेक विकृतियों के कारण धर्म की श्रृंखला ढीली –सी बन गयी थी । ब्राह्मण वर्ग धर्म के नाम पर जनता को ठगते थे । जनता भी बाह्याडम्बरों को धर्म समझ रही थी । इसके अतिरिक्त हिन्दू धर्म में अनेक मत – मतान्तरों का उदय हो रहा था । अतः हिन्दू धर्म का कुछ नया ही रुप इस काल में देखा जाता है ।

ग– दादू दयाल के समय की सामाजिक स्थिति

कबीर के समान ही दादू कालीन समाज , सामाजिक कुरीतियॉं, धार्मिक कुरीतियॉं, धार्मिक रुढ़ियों, अन्धविश्वासों एवं साधना संबंधी मिथ्याचारों से ग्रस्त था । मूर्ति पूजा , तीर्थ यात्रा ,जादू टोना ,छुआछूत आदि कुरीतियॉं दादू कालीन समाज में पूर्ववत ही चलती आ रही थी ।

1:– परशुराम चतुर्वेदी, उत्तर भारत की संत परंपरा, पृ. 419

मुस्लिम शासकों की हिन्दुओं के प्रति असहिष्णु नीति के कारण हिन्दू जनता पतन की ओर जा रही थी । हिन्दू राजा कमजोर और मुगल सत्ता के अधीन थे । मुगल शासकों ने हिन्दुओं के पतन के लिये एक पद्धति अपनाई थी कि हिन्दू सामंत की मृत्यु हो जाने के बाद वे उसके परिवार की चिन्ता न करते हुये उसकी सम्पूर्ण सम्पत्ति शासन के खजाने में जमा कर लेते थे । अतः सामन्तों के परिवार अनाथ बन जाते थे । मुगल की इस नीति के कारण हिन्दुओं के अनेक परिवारों की आर्थिक एवं सामाजिक उन्नति पर कुठाराघात हो रहा था ।

राज्याश्रय की ताकत से मुस्लिम हिन्दू जनता के साथ मनमानी करते थे और वे हिन्दू कन्याओं का क्रय – विक्रय करते थे ।

संक्षेप में कह सकते हैं कि हिन्दू समाज पतनोन्मुखी अवस्था की ओर जा रहा था ।

खण्ड – स

क– अखा के समय की राजनीतिक स्थिति

अखा का समय सन् 1615 के बाद का माना जाता है । यह समय गुजरात में मुसलमान शासक (सन् 1573 ई. से 1758 ई.) के मध्य का है ।

अखा के समय की राजनीतिक परिस्थिति का उल्लेख करते हुए डॉ. आर . डी . पाठक लिखते हैं –

" अकबर ,जहाँगीर और शाहजहाँ के राज्य का उद्देश्य अपनी कीर्ति फैलाना और अपना प्रभाव देखने और सुननें का था। ये शासक यहाँ की जनता के साथ उतने नहीं टकराते थे जितने आपस में झगड़ते थे । " 1–

1:– अखो एक स्वाध्याय, पृ. 67, सागर प्रकाशन द्वारा प्रकाशित, 1976

जबकि कुवँर चन्द्रप्रकाश सिंह के अनुसार तत्कालीन परिस्थिति हिन्दुओं के लिये दयनीय थी– "बिना कोई योग्यता दिखाये या बगैर किसी प्रकार का परिश्रम किये ही ,राज्य के ऊँचे ऊँचे ओहदे मुसलमानों के लिये खुले थे । दुर्व्यसनों, कुकर्मों और जघन्य अवरोधों में आकंठनिमज्जिता ये शासक खुले आम इच्छानुसार जन समुदाय को दबाते और उनपर अत्याचार करते थे । इस्लाम के अनुयायियों को छोड़कर शेष जनता पशुओं का सा जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य थी ।" 1–

डॉ. आर. जे. शर्मा के अनुसार मुहम्मदशाह तीसरा की मृत्यु (1561 ई.) के बाद गुजरात में भयंकर अशान्ति उत्पन्न हो गयी थी । और अकबर ने जब 1573 ई. में इसे अपने दूसरे अभियान में जीतकर 'सलतनते मुगलिया ' का एक प्रान्त बनाया , तब भी यहॉ शान्ति की स्थापना न हो सकी थी। 2–

इसके अलावा अकबर का सन् 1605 ई. में 49 वर्ष के लम्बे शासन के बाद देहान्त हो गया । इसकी मृत्यु होते ही सन् 1609 ई. में मालिक अंबर ने बड़ी सेना एकत्र कर सन् 1609 ई. में गुजरात पर चढ़ाई की । तब से गुजरात में मुसीबतों का दौर शुरु हो गया । 1614 ई. में सुलतान बहादुर ने गुजरात पर लूट की । इसकी लूट के बाद शान्ति की स्थापना हुई , लेकिन वह भी क्षणिक थी । 3–

1621 ई. में शाहजहॉ का जहांगीर के विरुद्ध विद्रोह , औरगंजेब की सुबेदारी के दो वर्ष (1644 –46 ई.) में हुए साम्प्रदायिक हल्ले , 1640 ई. में

1:– अक्षय रस, पृ. 6,7, म. स. वि., बड़ौदा द्वारा प्रकाशित, सन् 1963

2:– कबीर और अखा का तुलनात्मक अध्यायन, पृ.–71, वा. हि. वि. द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण– सन् 1983 ई.

3:– गुजरातनुं संस्कृतिक इतिहासः इस्लाम युग, खण्ड–41

नवानगर के जाम का उपद्रव , इसके अलावा हिन्दू राजाओं – शिवाजी (1666 एवं 1670 ई.) की लूट , राजा नाना कुँवर ,भीमसिंह की लूट एवं 1679 ई. में हुआ इडर का विद्रोह आदि को देखते हुए हम इस निष्कर्ष पर आ सकते हैं कि गुजरात में मुगलकाल में अशान्ति ही रही ।

डॉ. आर. जे .शर्मा का मत है कि गुजरात में मुगलशासन के दौरान अशान्ति और अव्यवस्था फैली थी । 1–

औरंगजेब ने अपनी सूबेदारी के समय गुजरात में हिन्दुओं के मन्दिरों को मस्जिद में बदल देने के प्रयत्न किए थे । 2–

कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह ने गुजरात की मुगलकालीन राजकीय परिस्थिति का उचित ही चितार दिया है – " अकबर के बाद सत्रहवीं शताब्दी में गैर मुसलमानों की पदोन्नति वृद्धि सा समानता का दावा इस्लाम के आधार भूत सिद्धान्तो के हिसाब से नाजायज था । इसलिए ऐसी दशा में राजनतिक , सामाजिक और धार्मिक अवस्था का नितान्त अस्थाई अनिश्चितता पूर्ण होना अनिवार्य था । 3–

ख– अखा के समय की धार्मिक स्थिति –

अखा के समय अनेक धर्म और सम्प्रदाय प्रचलित थे । उनमें हिन्दू , मुस्लिम , बौद्ध , जैन आदि प्रमुख थे । हिन्दू धर्म

1:– कबीर और अखा, पृ. 71–74,वा. हि. वि. द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण, सन् 1983 ई.

2:– वो. आर. कानूनगो : हिस्टोरिकल एसेज, पृ. 65–66

3:– अक्षय रस, पृ.–7, सं. कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह, म. स. वि., बड़ौदा द्वारा प्रकाशित, सन् 1963 ई.

अनेक संप्रदायों में विभक्त हो गया था । सभी धर्म एवं सम्प्रदायों में आपस में विरोध की भावना रहती थी । सभी धर्मों के अनुसार ' अपना ही धर्म श्रेष्ठ है ' ऐसा मानकर चलते थे और दूसरे धर्मों की कटु आलोचना करने में ही व्यस्त रहते थे । धर्म के मूल सिद्धान्तों का पालन और आचरण की जगह कर्म – काण्ड और वितण्डावाद ही रह गये थे ।

हिन्दू समाज बहुदेवोपासना में फँसा था । शैव मत वाले शिव को , शक्ति पंथ वाले भवानी को ,वैष्णव पंथ विष्णु को बड़ा मानते थे । इस युग में नवीन पंथ भी अधिक स्थापित होने लगे थे । "नवीन पंथ चलाने के कारण भी इस युग में इतनी अनुकूलता के कारण बरसात में कुकुरमुत्तों की तरह गुजरात में धर्मो की उत्पत्ति हुई । 1–

निष्कर्ष रुप में हम यह कह सकते हैं कि इस युग में बाहरी आडंबर , मिथ्या ,व्यवहार , विलासी धर्माचार्यों ढोंगी गुरु आदि का बोलबाला था ।

ग– अखा के समय की सामाजिक स्थिति

तत्कालीन समाज का हिन्दू समाज अनेक जाति तथा उप –जातियों में विभक्त हो गया था । उनमें मुख्य ब्रह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , और शूद्र थी । उनमें अस्पृश्यता , बाह्याचार , छूआछूत , की भावना उत्कर्ष को प्राप्त कर चुकी थी । नरसी मेहता (सं. 1471 –1536) को' ढेडवाडे' में कीर्तन करने जाने के लिए ब्राह्मणों ने परेशान किया था । 2–

स्त्रियों का दशा सोचनीय थी । उस समय दहेज , बाल–विबाह , सतीप्रथा, घूंघट प्रथा , वेश्यावृत्ति, बहुपत्नीत्व आदि दूषण चरम सीमा पर थे । अकबर ने बाल विबाह ,दहेज और बहुपत्नीत्व , 3– आदि

1:– गोवर्धन राम त्रिपाठी, दि क्लासिकल पोएट्स ऑफ गुजरात, पृ. 3

2:– के. का. शास्त्री, कवि चरित्र

3:– एम. आर. मजूमदार, कल्चरल हिस्ट्री ऑफ गुजरात, पृ. 150–51

दुष्प्रभावों को दूर करने का निष्फल प्रयास किया ।

इसके अतिरिक्त लोग अनेक प्रकार के बाहरी क्रियाकाण्ड में विश्वास करते थे । मुश्लिम शासकों के अत्याचारों के कारण धर्म–परिवर्तन के डर से लोगों में डर छाया रहता था । भय को दूर करने में लोग झाड़–फूँक, टोने–टोटके, आदि में विश्वास करने लगे थे । 'ग्रहों के नडवर और उसके निवारण के उपाय और भूत–प्रेतादि का भय तथा उसके निवारण के प्रयत्न किये जाते थे । नित्य–नियम में पूजा–पाठ , कथा–वार्ता, तीर्थ–यात्रा, भजन–कीर्तन, मंत्र–तंत्र करनें में तथा कंठी लगाकर गुरु शरण जाने में गौरव माना जाता था । 1–

समाज का उच्च वर्ग विलासिता में डूबा था । उनमें मादक वस्तुओं का सेवन ,जुआ, शिकार, जीव–हिंसा ,नृत्य, गायन आदि आम बात हो चुकी थी । निम्नवर्ग में भी नैतिक गिरावट आ गयी थी । एम. आर.मजुमदार के अनुसार " निम्नवर्ग की नैतिकता बड़ी सस्ती थी । एक ही अभावग्रस्त साल में उनके धर्म व इमान के बिकने में देर न लगती थी । – 2

समाज का मध्यम वर्ग नैतिक दृष्टि से ऊँचा था । लेकिन वह भी कभी कभी वेश्या गृह में जाता था । हाँलाकि मुस्लिम जातियों की तुलना में हिन्दुओं का चरित्र कई गुना ऊँचा था ।

मुस्लिम समाज में भी जाति भेद का दूषण आ गया था । इनमें अरब , तुर्क, पर्सिया ,मुगल,पठान, सैयद,वोरा, शेख,मोमिन, शिया,सुन्नी, आदि थी । इन जातियों का भी नैतिक पतन हो चुका था ।

1:– अखो एक स्वाध्याय,पृ.– 69, सागर प्रकाशन द्वारा प्रकाशित , बड़ौदा, सन् 1976 ई.

2:– कल्चरल हिस्ट्री ऑफ गुजरात, पृ. 57

खण्ड – द

कबीर, दादू दयाल एवं अखा के समय की राजनीतिक, धार्मिक एवं सामाजिक स्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन –

कबीर ,दादू एवं अखा पर तत्कालिन रातनीतिक ,धार्मिक,एवं सामाजिक स्थिति का क्या प्रभाव पड़ा ,यह चिन्तनीय विषय है ।

वैसे तीनों संतों ने संसार को नश्वर माना है तो उसके बाद राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक आदि पहलुओं पर विचार करने की बात ही नहीं उठती । यह अत्यन्त विचारणीय स्थिति है कि जिस वाणी से संसार व परिवार सभी को मिथ्या माना गया है, वह राजनीतिक , धार्मिक एवं सामाजिक दृष्टि से प्रासंगिक कैसे ?

कबीर,दादू और अखा की रचनाओं की पार्श्वभूमि का निरुपण करते समय अधिकतर आधुनिक आलोचक यह कहते हैं कि संतों का भक्त–रुप उनके युग की विभिन्न परिस्थितियों के कारण उभरा । लेकिन इससे सहमत होना मुझे ठीक नहीं लगता । हमें भारत की प्राचीन आध्यात्मिक परम्परा को देखते हुये इस सन्दर्भ में जल्दबाजी से निष्कर्ष पर आना ठीक नही होगा । वैसे तो हम आसानी से इस निष्कर्ष पर आ सकते हैं कि मध्यकालीन समाज धार्मिक संकीर्णताओं एवं कर्मकाण्ड में उलझ गया था, मूल सत्य को खो बैठा था इसलिए इन संतों ने समाज सुधारणा हेतु तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक ,सांस्कृतिक ,धार्मिक व्यवस्था से संबंध हर चीज का खंडन किया । लेकिन यह कहना उचित नही है क्योंकि उनका विरोध खंडन मात्र से ही नही है वरन धर्मो में निहित सच्ची भक्ति पर बल देने हेतु किया है । उन्होंने व्यावहारिक स्तर पर इन सबका विरोध नही किया । उनकी रचनाओं में यदि समाज के पारिवारिक संबंधो का उल्लेख हुआ है तो भी उन्हें अनित्य , अवास्तविक तथा भ्रम मात्र कहकर उसका अवमूल्यन ही हुआ है । संतों का वास्तविक संबंध केवल आत्मा और

परमात्मा की एकता का ही है और इस एकता के लिए उन्होंने भक्ति ,नाम सुमिरन, गुरु ,शब्दयोग, सत्संग आदि को अनिवार्य माना है । इसलिए यह कहना गलत है कि तत्कालीन परिस्थिति वस अपना आध्यात्मिक दर्शन बनाया । इस देश में भक्ति मार्ग मध्यकाल की पैदाइश नही है , वल्कि वह तो बेद, उपनिषद , गीता के समय से चली आ रही अक्षुण्ण परम्परा है । उमाशंकर जोशी ने यथार्थ ही कहा है " परलोक की ओर ध्यान देना वह हमारे देश में कोई सत्रहवीं शताब्दी का ही ठेका न था, वह तो पुराना और प्रचलित राजमार्ग है । मुसलमानों का नामों निशान नहीं था उसके पहले अनेक मुनि संघ इस मार्ग पर आए हैं । ऐहिक चीजों से नफरत भी सत्रवहीं सदी की अथवा शंकराचार्य के समय की भावना नहीं है। महाभारत काल

में भी और उससे पूर्व उपनिषद काल में भी यह वृत्ति पूर्णरुप से पायी जाती है। इस दृष्टि में अखा की विचार सृष्टि में शायद ही ऐसा कोई महत्वपूर्ण तत्व होगा जिसका मूल उपनिषद् साहित्य में न मिले ।,1—

इसके अतिरिक्त वे अन्य स्थान पर कहते हैं —" कबीर और अखा में मिल रहे आवेश ,उग्रता और उत्कटता के प्रदर्शन में हमें दोनों के समकालीन समाज—जीवन को ही सर्वथा उत्तरदायी मानना नहीं चाहिए । कबीर और अखा जैसे जागरुक तत्वचिन्तक कोई भी युग में जन्म ले फिर भी उनका आवेश उतना ही रहेगा जितना आज है ऐसा मानना ज्यादा सयुक्तिक है । उनका ऐसा आवेश त्रैकालिक जीवन के चिरंतव सत्य से पैदा हुयी उष्मा है और उसके लिए समकालीन जीवन को ही उत्तरदायी न माना जाय । अखा और कबीर जैसे कवियों का आलेखन करने वाले इतिहास कारों को इतना ध्यान में रखकर आगे चलना है । 2—

1:— अखो एक अध्ययन, पृ. 123, 124, सहायक मंत्री, गुजरात विद्या सभा, अहमदाबाद—9 द्वारा प्रकाशित, 1973 ई.

2:— वही , पृ. 148

उपर्युक्त कथन संत दादू दयाल के सन्दर्भ में भी यथार्थ है ।

अतः इन संतों की वाणी का मुख्य प्रतिपाद्य भक्ति और त्याग है । समग्र संसार और सांसारिक संबंधों की अनित्यता और असारता उनके समग्र दर्शन का सार है ।

अंत में उमाशंकर जोशी के शब्दों में कहें तो

" पारलौकिक पयगाम विशिष्ट युग का फल था एसा कहने में हेतुदोष दिखाई देता है ।" 1–

तीनों संतो की रचनाओं का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि उनमें तत्कालीन समाज की परिस्थिति की प्रतिक्रिया नहीं थी अपितु समाज की दुर्दशा का प्रतिबिम्ब जरुर था । अतः उनके समय में समाज की राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति कैसी थी उसका तुलनात्मक संक्षिप्त विवरण देना चाहूँगी ।

राजनीतिक परिस्थिति –

काल गणना की दृष्टि से कबीर, दादू, अखा के काल में अधिक अंतर नहीं है । तीनों संतों के काल में मुस्लिम शासन था ।

सिकन्दर से लेकर औरंगजेब के शासन तक का काल हिन्दुओं के लिए अत्यन्त यातना का रहा । हजारों हिन्दुओं की हत्या करना .2 उनको

1:– वही , पृ. 124

2:– चित्तौड़ के विजय के समय अकबर ने तीस हजार हिन्दुओं की हत्या की थीं । (मुगल एम्पायर, एस. आर. शर्मा, पृ. 260 – 261)

जीते जी जला डालना, अथवा पानी में डुबो डालना. 1– हाथियों के पैरों के नीचे कुचलवा डालना, 2– उनके मन्दिरों को तुड़वा डालना , 3– अथवा बलात् धर्म परिवर्तन करवाना 4– आदि दृष्टि से तीनों संतों के काल खण्ड में साम्य था ।

मुस्लिम शासकों के द्वारा किए उपर्युक्त अत्याचारों का चित्रण हमें तीनों संतों की रचनाओं में मिलता है।

तत्कालीन हिन्दू राजा इतने दुर्बल हो गये थे कि प्रजा के रक्षण का प्राथमिक कर्तव्य पूरा करने में भी असमंथ थे । वे शत्रुओं से युद्ध करने का सामर्थ्य खो बैठे थे । आपस में द्वेष और ईर्ष्या के कारण अन्य राजाओं से संगठन करके शत्रु का मुकाबला करने का ये दुर्बल और हतप्रभ राजा सोच भी नहीं सकते थे ।

मुस्लिम शासकों की हिन्दुओं के प्रति असहिष्णुता और हिन्दू राजाओं के आपसी संघर्ष के कारण तीनों संतों के समय अशान्ति बनी रहती थी । कबीर ,दादू एवं अखा ने अपनी रचनाओं में युद्ध से संबंधित चित्रों का आलेखन किया है , जिससे हमें तत्कालीन स्थिति स्पष्ट होती है । दादू एवं अखा की रचनाओं में अपेक्षाकृत कम युद्ध का चित्रण मिलता है । इसका कारण यह हो सकता है कि दादू एवं अखा के काल में अपेक्षाकृत शान्ति हों।

1:– गंग गुसाइनि गहरी गंभीर।। जंजीर बाँधि करि खरे कबीर।।

(आदिग्रंथ ,पृ. 1162)

2:– बिलन्दखान खोजा नामक एक उच्चधिकारी साँभर में आया और दादू के शत्रुओं के उक्साने पर दादू को मारने के लिए मतवाला हाथी छोड़ा था।

3:– काफ़िरों को दण्डित करके और बहुदेव वाद तथा मुर्ति पूजा का अंत करके गाज़ी और मुजाहिद बनने के उद्देश्य से तैमूर ने भारत पर आक्रमण किया था (इलेयट एण्ड डाउसन, ग्रंथ–3, पृ.–397)

4:– औरंगजेब ने गुजरात में हिन्दुओं के मंदिरोंको मस्ज़िदों में बदल देने का प्रयास किया था (यदुनाथ सरकार, औरंगजेब, पृ.– 193, 1951 ई.)

धार्मिक एवं सामाजिक स्थिति –

कबीर दादू एवं अखा की रचनाओं के अवलोकन से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज ब्राह्मण ,क्षत्रिय , वैश्य और शूद्र में विभक्त था । यह विभाजन के उपरान्त प्रत्येक जाति अनेक छोटे दायरों में विभक्त थी ।

इसके अलावा हिन्दू – मुस्लिम दोनों धर्मों में आपसी वैमनस्य की भावना थी । हिन्दू धर्म का पंडित और मुस्लिम धर्म का मुल्ला अपना व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्ध करने के लिये समाज को गलत रास्ते पर ले जा रहे थे।

हिन्दू और मुस्लिम समाज में व्याप्त अंधविश्वास 1– ,

1–कबीर – माला तिलक लगाइ के , भगति न आई हाथ ।
दाढ़ी मूछ मुड़ाइ कै, चलै दुनी के साथ ।।
(कबीर साखी संग्रह , पृ. 127–6)

कबीर –"माला तिलक पहरि मनमाना, लोगन राम खिलौना जाना । "
(कबीर ग्रंथावली, पृ. 153–343)

कबीर– माला पहरैं मनसुषी , ताथैं कछु न होइ ।
मन माला कौं फैरतॉं , जुग उजियारा सोइ ।।
(कबीर ग्रंथावली, 24–भेष कौ अंग, साखी–3 सं. बाबू श्यासुंदर दास)

कबीर– माला पहिरैं मनसुषी ,बहुतैं फिरैं अचेत ।
गॉंगी रौलै बहि गया , हरिं सूं नांहीं हेत ।।
(वही, साखी–4)

(शेष फूटनोट अगले पृ. पर)

जॉति–पॉति 1– छूआ–छूत 2– मांसाहार 3–तीर्थयात्रा, 4– , जादू–टोना 5–, जीव–हिंसा 6– , नमाज आदि का उल्लेख हम तीनों संतों के वाणी में पाते हैं ।

(शेष फूटनोट प्रारम्भ)

दादू – माला तिलक सूँ कुछ नहीं, काहू सेती काम ।
अंतरि मेरे एक हैं , अहि निसि उसका नाम ।।
(दादू दयाल की बानी, भाग–1, 14– भेष कौ अंग, बेलबीडियर प्रेस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, साखी –24, सन् 1963–74 ई.)

अखा– करमां माला मुख कहे हरि मन बेपार के नारी खरी ।
अखा भजनी आकाशे रहे ज्यॉं मन बुध्य चित्त अहंकार नो ले ।।
(छप्पा–755)

1–कबीर – साध बराम्हन,साध छतरी साधै जाती बनियॉं ।
साधन मां छत्तीस कौम हैं, टेढी तोर पुछनिया ।।
(कबीर साहब की शब्दावली, भाग–1 , चितावनी और उपदेश ,शब्द 10 बेलबीडियर प्रेस , इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित)

कबीर– ऊचे कुल क्यां जनमियां, जे करणी ऊँच न होइ ।
सोवन कलस सुरै भर्या, साधूं निंद्या सोइ ।।
(कबीर ग्रंथावली, 25–कुसंगति कौ अंग, साखी–7 सं. श्यामसुंदर दास)

कबीर – पांणी केरा बुदबुदा , इसी हमारी जाति ।
एक दिना छिप जांहिगे, तारे ज्यूँ परभाति ।।
(वही, 46 काल कौ अंग, साखी–14)

दादू – दादू कुल हमारे केशवा सगात सिरजनहार ।
जाति हमारी जगत गुरु परमेश्वर परिवार ।।
(दादू वाणी, मंगल दास, निःकर्मी पतिव्रता को अंग, पृ. 176)

अखा– धने तने को मोटा कुले की विद्या को खाड़ा बले ।
अे मोटम सघली जाये टली ज्यम आतशबाजी पलके बली ।।
(छपपा–891) (शेष फूटनोट अगले पृ. पर)

(शेष फूटनोट प्रारंभ)

अखा – अखा तेहने मोटा वदे जेने राम रमे छे रदे ।।

(छप्पा–881)

2– कबीर – एक जोत से सब उतपंना , कौन बाम्हन कौन सुदा ।

(क. ग्रं., पृ. 82–50)

कबीर – जे तू बांभन बमनी जाया ,तौ आंन बाट है काहे न आया ।

(क. ग्रं., राग गौड़ी, पद 41, सं. श्यामसुंदर दास)

दादू – जे पहुँचे ते कहि गये , तिन की एकै बात ।

सबै सयाने एकमति, तिन की एकै जात ।।

(दादू वाणी, मंगल दास, साखी– 172,पृ.2821)

अखा – आभडछेड अत्यंजनी जणी, ब्राह्मण वैष्णव कांधा घणी ।

बारे काल ए भांगवे बेव , सौने घेर आवी गई रहे ।

(छप्पा–9)

3.कबीर– खूब खांड है खीचड़ी ,मॉहि पड़ै टुक लूंण ।

पेड़ा रोटी खाइ करि, गला कटावै कौंण ।।

(कबीर ग्रंथावली 22–सॉच कौ अंग, साखी–12, सं. श्यामसुंदर दास)

दादू– (दादू) मॉस अहारी मद पीवै , विषै विकारी सोइ ।

दादू आतम राम बिन, दया कहां थैं होइ ।।

(दादू दयाल की बानी, भाग–1, सॉच को अंग, साखी–8, बेलबीडियर प्रेस,इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1984 ई.)

दादू– (दादू) मॉस अहारी जे मरा , जे नर सिंह सियाल ।

बग मंजार सुनहा सही ,एता परतषि काल ।।

(वही, साखी–6)

(शेष फूटनोट अगले पृ. पर)

(शेष फूटनोट प्रारंभ)

4– कबीर– मथुरा जावे द्वारिका ,भवै जावै जगन्नाथ।

साध संगनि हरि भगति बिनु , कछु न आवै हाथ।।

(क. ग्रं., साध कौ अंग, साखी–3 सं. श्यामसुंदर दास)

दादू– दादू कोई दौड़ै द्वारिका ,कोई काशी जाहिं ।

कोई मथुरा को चले ,साहिब घट में मांहि ।।

(दादू दयाल की बानी, भाग–1, साँच को अंग, साखी 147, बेलबीडियर प्रेस, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1963–74 ई.)

अखा– हज्ज तीरथ हजार हुवे ऐन अखंड जिस घर माया।

इन बीने फिरते बहुत मुवे कहाँ ? किंतु ?किस ठोर पाया।।

(अक्षयरस, झूलणा–25, सं. कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह, म. स. वि. बड़ौदा द्वारा प्रकाशित, सन् 1963)

अखा– सकल तीरथ सदगुरु नें चरणें पाप,ताप टली जाय।।

(अ. वा. , पद –51)

5–कबीर– कुकड़ी मारै बकरी मारै हक–हक करि बोलै।

सबै जीव साई के प्यारे उबर हुगे किस बोलै ।।

(क. ग्रं. , पद –63, सं. श्यामसुंदर दास)

दादू– छल करि बल करि थाइ करि ,मारै जेहि–तेहिं फेरि।

दादू ताहि न धीजिये ,परणै सगी पतेरि।।

(दादू दयाल की बानी, भाग–1 , साँच को अंग, साखी–12, बेलबीडियर प्रेस , इलाहाबाद द्वारा प्राकशित, सन् 1963– 74 ई.)

6–कबीर– यहु सब झूठा बंदिगी।

बरिया पंच निवाज।।

(क. ग्रं., साँच कौ अंग , साखी–51, सं. श्यामसुंदर दास)

(शेष फूटनोट अगले पृ. पर)

इसके अलावा अनेक उदाहरण संतों की रचनाओं में पाये जाते है। जिसे तत्कालीन समाज की धार्मिक एवं सामाजिक स्थिति स्पष्ट होती है ।

उपर्युक्त उदाहरणों से ज्ञात होता है समाज घोर अंधकार में डूबा हुआ था , जैसे हिन्दू समाज वाह्याडम्बर और क्रिया कांडों में धर्म के मूल तत्व को भूलकर फँसा हुआ था , ऐसी ही अवस्था मुस्लिम समाज में प्रर्वतमान थी । जहाँ हिन्दू समाज शासित होनें के कारण नैराश्य में डूबा हुआ था वहाँ मुस्लिम समाज शासक होनें के कारण उदण्ड और घमंडी बना हुआ था । मुस्लिम वर्ग अन्य धर्मो को तुच्छ और काफर समझ कर उन्हें अपमानित करता था एवं बलात् धर्म परिवर्तन करवानें को मजबूर करता था । हँलाकि मुस्लिम धर्म ही कुछ छुट–पुट अपवादों को न गिनते हुये अपने ही धर्म के मूल उपदेशों से कोषों दूर चले गये थे ।

खः:– कबीर की संक्षिप्त जीवन – जाति गुरु एवं रचनाएँ –

कबीर नें समस्त मध्यकालीन साहित्य को प्रभावित किया है । किन्तु उनके जीवन संबंधी ऐतिहासिक तथ्यों का निराकरण अभी तक नहीं हो पाया है । चौदहवीं शताब्दी में कबीर का आर्भिभाव उत्तरी भारत के इतिहास में एक क्रान्तिकारी घटना है । गुरु रविदास, पीपा, दादू, मीरा, रज्जब, मलूकदास, तुकाराम, गरीबदास, तुलसी, साहब आदि संतों नें अपनी वाणी में कबीर का उल्लेख बड़े आदर और भाव से किया है । संत दादू कबीर जी की वाणियों से प्रभावित हुये थे । वे कबीर को गुरुवत् मानते थे । उनकी कुछ साखियों में कबीर के प्रति अमिट श्रद्धा और भक्ति प्रकट होती है –

(शेष फूटनोट प्रारंभ)

दादू– हर रोज हजूरी होइ रहु, काहै करै कलाप।

मुल्ला तहाँ पुकारिये, जहाँ अरस इलाही आप।।

(दादू दयाल की बानी, भाग–1, साँच को अंग, साखी 46 बेलबीडियर इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1963–74 ई.)

जो था कंत कबीर का सोइ बर वरिहूँ ।
मनसा वाचा कर्मना मै और न करिहूँ ।।
सॉचा सबद कबीर का मीठा लागे मॉहि ।
दादू सुनवा परम सुख केता आनंद होइ ।। 1—

कबीर के समकालीन संत पीपा का एक पद कबीर के जीवन और उपदेश के प्रभाव को प्रकट करता है —

जो कलि मांझ कबीर न होते ।
जो ले वेद अरु कलियुग मिलि कर भगति रसातल देते ।
हम ते पवित कहा कहि रहते कौन प्रतीत मन धरते ।
नाना बानी देख सुनि स्रवना वहौ मारग अणसरते ।।
त्रिगुण रहित भगति भगवंत की तिहि बिरला कोई आवै ।।
दया होइ जो कृपानिधान की तौ नाम कबीरा भावै ।।
भगति प्रबल राख्यबे कारन निज जन आप पठाया।
नाम कबीर सॉच परकास्या तहॉं पापै कछु पाया ।। 2—

मोहिसिन फानी और अबुल फजल नें कबीर को मुवाहिद 'एक ईश्वर को माननें वाला' कहा है । शेख सादुल्ला ने "मृत्यु सन् 1522' जो कबीर के ही वक्त में हुये थे ,उनके पुत्र ने पूछा कि कबीर मुसलमान था या फिर काफिर ,तो उन्होंने जबाब दिया कि वह एक मुवाहिद था । और यह पूछे जाने पर की क्या मुवाहिद ,मुसलमान और काफिर दोनों से अलग हस्ती होता है , शेख सादुल्ला ने कहा कि यह एक ऐसा सत्य है जिसे आसानी से समझा नही जा सकता है और जिसके ज्ञान की प्राप्ति बहुत धीरे और मुश्किल से होती है ।

1:— दादू दयाल की बानी, भाग—1, 22—सबद को अंग, साखी—34, बेलबीडियर प्रेस ,इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित , सन् 1984 ई.

2:— सरबगुटिका नामक पुस्तक से उद्धृत, सं.—1842, पत्र— 188

मुवाहिद के गहरे अर्थ को समझाने के लिये सैयद अब्दुल अहतर रिज़वी अपनें सूफी इतिहास मे शेख फरोद के पुत्र ख्वाजा याकूब के वचन दोहराते हैं ," मुवाहिद का ध्यान नेक कर्मो पर होता है उसका हर एक कार्य प्रभु की कृपा पाने के लिये होता है ,पानी उसको डुबोनहीं सकता और आग उसे जला नहीं सकती। वह तौहीद या वहदत अल–वजूद (यह भाव कि संसार में एक खुदा के सिवा और कुछ नहीं , संसार में सर्वत्र प्रभु को मौजूद देखना) में लीन होता है वह बेखुदी आलम में मस्त रहता है । इस वर्ग में आनें वाला सूफी या आशिक हर तरफ से बेताल्लुक रहता है । अगर वह अपने आप को ढूँढता है तो खुदा को पा लेता है ,। अगर वह खुदा को ढूँढता है तो वह अपने आप को पा लेता है। जब ऐसा प्रेमी अपने प्रियतम में लीन हो जाता तब प्रेमी–प्रियतम के गुण एक हो जाते है। 1–

इस तरह कबीर के समकालीन और उनके बाद में आने वाले प्रायः सभी संतों ने कबीर का उल्लेख बड़े आदर से किया है । परंतु न तो कबीर के समकालीन कवियों और इतिहासकारों ने और न बाद में आने वाले संतों ने कबीर के जीवन वृतांत पर कोई प्रकाश डाला है । कर्म काण्ड में जकड़े लोगों ने उनकी इतनी प्रशंसा की है कि उनके वृतांत चमत्कारिक घटनाओं और अतिशयोक्ति से परिपूर्ण हो गये है ।

कबीर की जीवन गाथा मौखिक परंपराओं से होती हुई कल्पना और सच्चाई के साथ इतनी घुल मिल गई है कि आज वास्तविकता पता लगाना कठिन होगया है । फिभी वो एक महान संत और सरल हृदय भक्त होने के साथ ही स्पष्ट वादी ,निर्भीक तथा अपने आदर्शों के लिये हर प्रकार की आलोचना और यातना सहने को तैयार थे ।

1:–" मारिफुत विलायत " में ख्वाजा याकूब सैयद अब्दुल अतहर रिज़बी द्वारा " ए हिस्ट्री ऑफ सफ़ीज्म इन इंडिया" (भाग–1, में उद्धधृत, पृ.–373)

HANSA MEHTA LIBRARY
Univers

कबीर का सर्वप्रथम उल्लेख नाभादास की भक्तमाल में मिलता है । यह ग्रंथ सन् 1585 में सम्पूर्ण हुआ था यद्यपि इनमें कबीर के जन्म जाति ,माता, पिता, आदि का कोई उल्लेख नहीं है ,फिर भी इसमें कबीर के चरित्र और दृढ़ता का पता चलता है ।

कबीर कानि राखी नहीं ,वर्णाश्रम षट दरसनी।
भक्त विमुख जो धरम ताहि, अधरम करि गायो।
जोग जग्य व्रत दान भजन बिनु तुच्छ दिखायों।।
हिन्दू तुरक प्रमान रमैनी सबदी साखी ।
पच्छताप नहि बचन सबहीं के हित की भाखी ।।
आरुढ़ दसा ह्वै जगत पर मुख देखि नाहिन भनी।
कबीर कानि राखी नहीं ,वर्णाश्रम षट दरसनी।।1–

<u>कबीर जाति::–</u>

अठ्ठारहवीं शताब्दिी के प्रारम्भ से कबीर के जन्म के साथ कई चमत्कारिक बातें जुड़ गई । कुछ लोगों के अनुसार रामानन्द के आशीर्वाद के फलस्वरुप जनमें एक विधवा ब्रह्मणी के पुत्र थे । रामानन्द ने यह न ध्यान देते हुये कि उन्हें नमस्कार करने वाली स्त्री विधवा है ,आशीर्वाद दिया "पुत्रवती हो" । ब्रह्मणी ने लोक–लाज के कारण बालक को लहरतारा तालाब पर छोड़ दिया । ऐसा कहा जाता है कि निरु जुलाहे और उसकी पत्नी नीमा ने बालक को देखा और उसे उठा लिया और उसे पाल–पोष कर बड़ा किया । कबीर पंथियों ने तो यहाँ तक माना है कि कबीर के कोई माता–पिता न थे ,और उन्होंने आकाश से एक ज्योति के रुप में उतर कर बालक का
रुप धारण किया।

1:– भक्तमाल, नाभादास, छपपय–60, पृ.–461–462

संत रज्जब की बानी से भी ज्ञात होता है कि कबीर जुलाहा जाति के थे–

जुलाहा गर्भै उत्पन्नों साध कबीर । 1–

धर्मदास ,जो कबीर के शिष्य थे, कहते है कि कबीर की माता तुर्क और पिता जुलाहा थे –

माय तुरकनी बाप जुलाहा ,बेटा भक्त भये । 2–

गुरु रविदास जो स्वयं कबीर के समकालीन थे स्पष्ट लिखते हैं कि कबीर के माता–पिता मुस्लिम ही नहीं थे ,बल्कि उनके कुल में ईद आदि त्यौहारों के समय जानवरों की बली दी जाती थी ,और शेख, सैयद ,पीरों आदि की मानता मानी जाति थी । आगे वे बताते हैं कि उनके पुत्र कबीर ने अपने ऊँचे आचरण और भक्ति के द्वारा तीनो लोकों में प्रसिद्धि पाई –

जाकै ईदि बकरीदि कुल गउ रे बधु
करहि मानीअहिं सेख सहीद पीय।
जाकै बाप वैसी करी पूत
ऐसी सरी तिहुं रे लोक परसिध कबीरा।। 3–

गुरु नानक जी की रचना में भी कबीर की जाति और गुरु की जानकारी मिलती है –

नाभा छीबा कबीर जुलाहा पूरे गुरु से गत्ति पाहीं । 4–

अनन्त दास भी कबीर को काशी का जुलाहा मानते है :

1:– रज्जब वाणी, साध–महिमा

2:– कबीर–कसौटी, पृ.–13

3:– आदिग्रंथ, पृ.–1293

4:– सिरि रागु, पृ.–36, आदि ग्रंथ

दविस्ताने मज़हिब नामक ग्रंथ में लिखा है कि कबीर जुलाहे थे । "ले. मोहासिनफानी, पृ. 144"

काशी बसै जुलाहा एक , हरि भगतिन की पकरी टेफ । 1–

धन्ना नें भी उन्हें जुलाहा माना है —

बुनना तनना तिआगिकै प्रीति चरन कबीरा।

नीच कुता जोलाहरा भइयो गुनीय गभीरा।। 2–

उपर्युक्त ग्रंथों के साक्ष्य के बाद आधुनिक युग के लेखकों और अनुसंधाताओं ने कबीर साहब के विषय में तथ्यानुसंधान किया है और उसे भी यहाँ देखना आवश्यक है ।

डॉ. विद्यावती 'माकविका' के अनुसार कबीर 'कोरी' जाति के थे । उनके अनुसार 'कोरी' अथवा 'कोली' 'कोलीय का विकृत रुप है । पालि ग्रंथों के अनुसार 'कौलीय' जाति का मुख्य व्यवसाय खेती करना और वस्त्र बुनना था गौतम बुद्ध की माता महामाया 'कोलीय' राजवंश की थी । इस कुल की महारानियाँ तक सूत कातती और बुनती थी । कालान्तर में यह 'कोलीय ' जाती संपूर्ण भारत में फैल गई । मध्य युग में यवन आक्रमणों से इस जाति को बहुत कष्ट भोगना पड़ा । अतः या तो इन्होंने हिन्दू धर्म स्वीकारा या मुसलमान धर्म स्वीकारा । कुछ लोग देश से भाग गये । डॉ. विद्यावती के अनुसार कबीर के पूर्वज यही कोलिय राजपूत थे जो मुसलमान हो गये । इस 'कोलिय' को ही 'कोरी' कोली' या 'जुलाहा' के नाम से भी पुकारा जाता था । 3–

आचार्य क्षिति मोहन सेन के अनुसार "बंगाल के युगी (जुगी) या नाथ लोग पहले तो वेदस्मृति शासित हिन्दू ही नही थे । नाथ धर्म एक स्वतंत्र और

1:– कबीर साहिब की परचई, ' अनन्तदास वाणी'

2:– राग आसा–2, आदि ग्रंथ

3:– हिन्दी साहित्य पर बौद्ध का प्रभाव, शोध प्रबंध, डॉ. विद्यावती'माकविका', पृ– 143

पुराना धर्म है । मध्ययुग मे इनमें अधिकांश बाध्य होकर मुसलमान होगये थे ये ही जुलाहे हुये। 1–

रिजली साहब नें अपनें ग्रंथ 'पीपुल्स आफ इण्डिया में ' लिखा है कि यह जुलाहा जाति किसी निम्न स्तर की भारतीय जाति का मुसलमानी रुप है । सामाजिक परिस्थित इनकी अच्छी नही रही और नवागत धर्म में कुछ अच्छा स्थान पा जाने की आशा से इन्होनें समूह रुप से धर्मान्तर ग्रहण किया होगा।2–

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी मानते हैं कबीर के बानीं में नाथपंथी संस्कार देखने को मिलते है। । ये ही नाथपंथी जातियों ने मुसलमान धर्म अंगिकार किया था । 3 –

मुहसफनीं काश्मीर वाले के लिखे इतिहास ग्रंथ 'तवारीख दविस्ता ' से भी यही ज्ञात होता है कि कबीर जुलाहा था । 4 –

श्री कबीर साहब जी की परचई' (अनन्त दास लिखित) जो कि राम कुमार वर्मा के पास है । यह प्रति 'वाणी हजार नौ'' के गुटिका का भाग मात्र है। इस प्रति में भी कबीर की जाति जुलाहा होने का उल्लेख है ।

कासी बसै जुलाहा ऐक । हरि भगति की पकड़ी टेक ।। 5–

कबीर साहब से तत्वा और जीवा नामक दो दक्षिणी पंडितों नें शिष्यत्व स्वीकार किया था तब वे अपनी जाति से बहिस्कृत हुये थे । कबीर से उन्होंने

1:– भारत वर्ष में जाति भेद, आचार्य क्षितिमोहन सेन, पृ.–144

2:–पिपुल्स ऑफ इण्डिया, ले. डॉ. रिजली साहब

3:– कबीर, ले. हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.–25, राज कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना द्वारा प्रकाशित, सन् 1987 ई.

4:– 'कबीर एण्ड द कबीर पन्थ' में उद्धृत, पृ.– 37

5:– इति श्री सरब गोटिका संपूर्ण।। बंशी हजार नौ।। 9000।। संपूरणन भवंत

अपनी कन्या का विवाह के संबंध में अनुमति माँगी थी । तब कबीर साहब ने परामर्श दिया था कि " दोउ तुम भाई करौ आपु में सगाई । "1 –

उपर्युक्त दोहे के आधार पर परशुराम चर्तुवेदी ने सिद्ध किया है इनकी विचार धारा पर मुसलमानी संस्कृति की छाप स्पष्ट थी । 2–

दबिस्तानें मजाहिब नामक ग्रंथ में लिखा है कि कबीर जुलाहे थे । 3–

कबीर साहब के दो पद्यों में क्रमशः आए हुए 'कहै कबीरा कोरी' तथा 'सूतै–सूतै मिलायै कोरी' को देखकर डॉ. बड़थ्वाल ने कल्पना की है कि कोरी ही मुसलमान धर्म में दिक्षित हो जाने पर जुलाहे हो गये तथा "उक्त कोरियों को जुलाहा हुये अभी इतने दिन नहीं हुये कि 'कोरी ' कहलाना वे अपना निरादर समझे । इसके सिवाय कबीर साहब द्वारा योग साधना संबंधी अनेक प्रसंगों का उल्लेख किये जाने के कारण वे अंत में इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि "मेरी समझ से कबीर भी किसी प्राचीन तथा कोरी, किन्तु तत्कालीन जुलाहा कुल के थे जो मुसलमान होने से पहले जोगियों का अनुयायी था । " 4–

वेस्टकाट, 5 ,डॉ. भंडाकर, 6 , आदि ने कबीर को जुलाहा माना है ।

मुहसन फानी काश्मीर वाले के लिखे फारसी इतिहास ग्रंथ "तवारीख

1:– श्री रुपकला, ' भक्तिमाल'(भक्ति सुधा स्वाद तिलक सहित) लखनउ सं. 1983, पृ.– 544

2:–उत्तर भारत की संत परंपरा, परशुराम चतुर्वेदी, पृ.– 149

3:– ले. मोहासिन फानी, पृ.– 144

4:– डॉ. पी. द. वडथ्वाल :'योग प्रवाह' (काशी विद्यापीठ सं.– 2003) पृ. 126

5:– वेस्टकाट, कबीर एण्ड दि कबीर पंथ, पृ.–35

6: डॉ. भण्डारकर, वैष्णोवेन्म, शैविज्म एण्ड माइनर रेलिजस सिस्टम , पृ. 97

दविस्तां" से भी यही बात प्रकट होती है । उसमें लिखा है कबीर जुलाहा और एकेश्वरवादी था । 1–

प्रायः प्राचीन भक्तों ,कवियों एवं आधुनिक विद्वानों ने कबीर का जुलाहा होना स्वीकार किया है । कबीर के पदों में भी हमें यही बात देखने को मिलती है–

गुरु परताप साध की संगति ,मन बांछित फल पावै ।
जाति जोलाहा नाम कबीरा ,बिमल–बिमल गुनि गावैं ।। 2–

*   *   *

जाति जुलाहा मति कौ धीर ,हरषि गुण रमैं कबीर ।। 3–

*   *   *

मेरे राम की अभै पद नगरी ,कहै कबीर जुलाहा ।। 4 –

*   *   *

जाति जुलाहा नाम कबीरा ,बनि–बनि फिरी उदासी । 5–

*   *   *

कहत कबीर मोहि भगति उमाहा, कृत करणीं जाति भया जुलाहा । 6

*   *   *

तू बाम्हन मै काशी क जोलाहा ।। 7:–

1:–'कबीर एण्ड द कबीर पंथ' में उद्धृत पृ. 37

2:– कबीर साहब की शब्दावली, भाग–1, चितावनी और उपदेश, शब्द–23, साखी–3 बेलबीडियर प्रेस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, 1990 ई.

3:– कबीर ग्रंथावली, राग गौड़ी, पद–124, सं. श्यामसुंदर दास

4:–कबीर ग्रंथावली, राग गौड़ी, पद–134, सं श्यामसुदर दास , क. प्र. स.

5:–वही ,राग आसावर्य , पद–208, वही–

6:– वही, राग आसावर्य, पद–271, वही

7:– क. वा.,पद–23, साखी–1, डॉ पारस नाथ तिवारी, रा. प्र. इ. सन् 1991

कबीर के पदों में जुलाहा के अतिरिक्त 'कोरी' 'कमीना' आदि शब्दों का भी उल्लेख मिलता है –

हरि का नॉव अभै पद दाता ,

कहै कबीरा कोरी।। 1–

* * *

तहाँ जाउ जहाँ पाट पटंबर अगर चंदन घसि लीना।

आई हमारे कहा करोगी हम तो जाति कमीना।। 2–

कबीर ने अपने पदों में 'जुलाहा'कोरी' कमीना' आदि शब्दों का उल्लेख तो अनेंक बार किया है ,लेकिन उन्होंने स्वयं को मुसलमान या हिन्दू नहीं कहा है :–

हिन्दू कहूँ तो मैं नाहिं।

मुसलमान भी नाही।

पॉच तत्व का पुतला ।

गैबी खेलें माहि।। 3–

* * *

और खुदाइ मसीति बसत है, और मुलकि किस केरा।

तीरथ मूरती रांम निवासा ,हुहु मैं किनहूँ न हेरा।। 4–

कबीर साहब के अनुसार जाति–पाँति के कीचड़ में फँसकर हम अमुल्य जन्म खो देते –

1:– क. ग्रं., राग भैरुं ,पद– 346, वही–

2:– क. ग्रं., पद–277,

3:– कबीर साखी संग्रह, पृ.–75

4:– क. ग्रं., राग आसावादी, पद–259, सं.– श्यामसुंदर दास

गरब बास महि कुल नही जाती ।
ब्रह्म बिंदु ते सभु उतपाती।।
काहु रे पंडित बामन कब के होए ।
बामन कहि–कहि जनमु मत खोए।। 1–

अपना दृष्टान्त देते हुये वे कहते हैं कि मेरी नीची जाति को लेकर लोग मेरा उपहास और तिरस्कार करते हैं ,परंतु मैं तो उस जाति को उत्तम मानता हूँ क्योंकि इसमें जन्म लेकर मैनें प्रभु की भक्ति की है ।–

कबीर मेंरी जाति कउ, सभु को हंसनेहारु।
बलिहारी इस जाति कउ जिहि जपिओ सिरजनहार।। 2

लक्ष्मीदत्त वी. पंडित के अनुसार कबीर को किसी जाति का नहीं मानना चाहिये कबीर को योगी मानकर ही चलना चाहिये । उनकी जाति से क्या लाभ ? हमें ऐसे पुरुषों से ज्ञान का लाभ लेना चाहिये । ईश्वर के यहॉं से कोई जाति पैदा नहीं हुई परंतु समाज में काम को व्यवस्थित करने के लिये वर्ण व्यवस्था वेदों से प्रारम्भ हुई है कबीर ने जाति का विरोध अनेक स्थानों पर किया है अतः उन्हें किसी जाति का नहीं मानना चाहिये ।"3 –

–कबीर गुरु –

विद्वानों ने प्रायःकबीर के पिता नीरु और माता नीमा जुलाहे थे और बनारस नगर के बाहरी छोर पर रहते थे यह स्वीकारा है ।

यद्यपि कबीर को किसी प्रकार की विधिवत शिक्षा का अवसर नहीं मिल

1:– संत कबीर, राग गउड़ी, पद–7, ले. डॉ. राम कुमार वर्मा, हिन्दी साहित्य प्रेस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1957 ई.

2:– आदि ग्रंथ, पृ.– 1364

3:–संत कबीर, पृ.–33 विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा द्वारा प्रकाशित, सन्–1977 , ले. डॉ. लक्ष्मीदत्त वी. पंडित।

पाया था ,फिर भी कबीर की रचनाओं से पता चलता है कि वे एक विवेक शील तथा तीव्र बुद्धि व्यक्ति थे ,जिन्हे आध्यात्मिक गूढ़ तत्वों को समझने ,उनकी गहराई में जाने तथा उनका विवेचन करने की असाधारण योग्यता प्राप्त थी ।

बचपन से ही कबीर जुलाहे के व्यवसाय में अपने पिता का हाथ बँटाने लगे । धीरे–धीरे वे अपने कुल के इस व्यवसाय में कुशल हो गये परंतु इसके साथ ही परमात्मा संबंधी बातों में उनकी रुचि बढ़ने लगी जिसे देख कर कभी–कभी उनके माता–पिता चिन्तित हो उठते थे ।

कबीर के पदों से पता चलता है कि अपने जीवन के आरंभ में वे कई महात्माओं से मिले । संभव है कि उनसे कबीर को संतोष न मिला हो । बनारस में रहते हुये उन्हें कर्मकाण्ड के खोखले पन का अनुभव हो गया था । कबीर ने अपने जीवन में जिस भाग का उपदेश दिया वह सत्संग एवं नाम – भक्ति है । कबीर ने इसके लिये गुरु की आवश्यकता को स्वीकारा है । उन्होंने बार–बार गुरु महिमा गाई है । लेकिन कबीर के गुरु कौन थे ,इसका उल्लेख नहीं मिलता ,कबीर की रचनाओं में अपने जीवन के बारे में बहुत कम लिखा है अपने सद्गुरु के विषय में तो उन्होंने कुछ भी नही कहा है ।

सभी संतो की बानियों में गुरु की अपार महिमा का गान है ।
जन श्रुति के आधार से स्वामी रामानन्द को कबीर का गुरु माना जाता है । कबीर नें जब संतों के आध्यात्म मार्ग का उपदेश देना प्रारम्भ किया तो अंध श्रद्धा में बँधे हिन्दू मुस्लिम दोनों ने उनका विरोध और आलोचना की है । इस आलोचना से कबीर समझ गये कर्मकाण्ड और अंध श्रद्धा में फँसे लोग बनारस में उन्हें अपने मार्ग का शान्तिपूर्वक प्रचार नहीं करने देंगे । उन्होंने ऐसे व्यक्ति का आसरा लेना आवश्यक समझा जिसका बनारस के लोगों पर गहरा प्रभाव हो।

ऐसे व्यक्ति स्वामी रामानन्द थे जिन्हें एक विद्वान , शास्त्रों का ज्ञाता और धार्मिक नेता के रुप में पंडितों पुरोहितों और सब वर्ग के लोगों का आदर

प्राप्त था । परंतु रामानन्द म्लेच्छों तथा नीची जाति के लोगों का मुख तक नही देखते थे कबीर के लिये उनसे शिक्षा प्राप्त करना आसान न था । कहा जाता है कि उन्होंने चतुराई से रामानन्द का शिष्यत्व प्राप्त किया । रामानन्द प्रतिदिन प्रातःकाल ब्रह्म मुहुर्त में ही गंगा स्नान करने के लिये जाते थे । एक दिन कबीर घाट की सीढ़ियों में लेट गये । सवेरे के धुँधले प्रकाश में रामानन्द कबीर को न देख पाये और उनका पैर कबीर के सिर को लगा । चौककर रामानन्द बोल उठे" राम कह राम " । कबीर चुपचाप उठकर आ गये उन्होंने अपने को रामानन्द का शिष्य कहना प्रारंभ कर दिया ।

कुछ कट्टर लोगों ने रामानन्द से शिकायत की और पूछा कि उन्होंने एक मुसलमान को अपना शिष्य क्यों बनाया है ? जब उन्होंने इस बात को गलत बताया तो कबीर को बुलवाया गया । रामानन्द ने परदे के पीछे से पूछा कि कबीर ऐसी असत्य बात क्यों कह रहे हो ? कबीर ने उत्तर दिया कि घाट की सीढ़ियों पर उनके सिर को अपने चरण से छूकर रामानन्द ने 'राम नाम' देकर कबीर को दिक्षा दी है । सत्यवादी रामानन्द इस बात से इन्कार न कर सके और कबीर को शिष्य के रुप में स्वीकार कर लिया । परंतु परंपरा को कायम रखते हुये उन्होंनें कबीर से पर्दा रखा ।

रामानन्द कबीर के गुरु थे इस घटना का प्रायः उल्लेख सभी मध्यकालीन भक्तों और आधुनिक विद्वानों ने किया है । लोक प्रसिद्धि की दृष्टि से भी कबीर के गुरु रामानन्द माने जा सकते है । यद्यपि उनके लिये प्रामाणिक प्रमाणों का अभाव है ।

'कबीर कसौटी' के पद के अनुसार कबीर रामानन्द के शिष्य ठहरते हैं ।—

काशी में प्रगटे दास कहाये।
नीरु के गृह आये ।
रामानन्द के शिष्य भये ।
भवसागर पंथ चलाये । 1—

1:— कबीर—कसौटी पृ.—33

नाभादास कृत भक्तमाल में भी रामानंद की शिष्य परम्परा में कबीर पाए जाते हैं , इस बात का प्रमाण है –

श्री रामानंद रघुनाथ ज्यो दुतिय सेतु जग तारन कियो ।
अनंता नन्द कबीर सुखा सुर सुरा पद्मावती नर हरि ।
पीपा भवानंद रैदास घनासेन सुर सर की घर हरि ।
औरों शिष्य प्रशिष्य एक ते एक उजागर।
विश्व मंगल आधार सर्वानन्द दशधा ते आगर ।
बहुत काल बपि घारि कै प्रनत्र जनन कौ पारि दियौ ।।
श्री रामानन्द रघुनाथ ज्यौ दुतिय संतु जगतारन कियौ । 1–

कबीर के शिष्य धर्मदास की वाणी से भी यही बात प्रकट होती है । (कि कबीर रामानन्द के शिष्य थे) कबीर के कट्टर भक्त गरीबदास भी कबीर को रामानन्द के शिष्य बताते हैं । लेकिन उन्होंने गुरु से चेले को अधिक महत्व दिया है और उसे गुरु के उद्धार का कारण बताया है ।

गरीब रामानन्द से लख गुरु तोर चेले भाइ ।
चेलों की गिनती नहीं –पद में रहे समाई ।। 2–

मुहसनफानी काश्मीर वाले के लिखे फारसी इतिहास ग्रंथ 'तवारीखे दविस्वां' से भी यही बात प्रकट होती है । उसमें लिखा है ,आध्यात्म –पथ में पथ– प्रदर्शक गुरु खोज करते हुये वह हिन्दू साधुओं और

1:– भक्त माल, प1.–368, छप्पय–31

2:– 'हरिवर बंध' : पारख अंग वाणी, साखी'32

मुसलमान फकीरों के पास गया और कहा जाता है कि अंत में रामानन्द का चेला हो गया । 1 –

डॉ. रामचरण शर्मा का मत है कि कबीर के गुरु रामानन्द थे कबीर को रामानन्द से जो वस्तु प्राप्त हुई थी की 'राम – नाम' । 2–

श्यामसुंदर दास का अनुमान है कि "जब तक कोई विरुद्ध दृढ प्रमाण नही मिलते तब तक हम इस लोक प्रसिद्ध बात को रामानन्द कबीर के गुरु थे , बिल्कुल असत्य भी नहीं ठहरा सकते । 3–

श्री सीताराम चतुर्वेदी के अनुसार अपनी स्वभाविक वैष्णव उदारता के कारण स्वामी रामानन्द ने "हरि को भजै हरिका होई "के अनुसार कबीर को दीक्षा देकर शिष्य बना लिया हो या कबीर नें एकलव्य की भॉति स्वामी रामानन्द को अपना गुरु मान लिया हो । 4–

डॉ. सरनाम सिंह शर्मा जन श्रुति कबीर की उक्तियॉ ,अन्य महात्माओं की वाणियॉ एवं प्राचीन कृतियॉ इत्यादि अनेक संबद्ध विषयों का विश्लेषण कर इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि कबीर के गुरु रामानन्द थे और उन्होंने ही कबीर को राम–नाम का मंत्र देकर प्रेमाभक्ति में दीक्षित किया था । 5–

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी एक स्थान पर कहते हैं कि जिस दिन से महागुरु रामानन्द ने कबीर को भक्ति रुपी रसायन दी उस दिन से उन्होंने मुद्रा और आसन की गुलामी को सलामी दे दी । 6 –

1:– 'कबीर एण्ड द कबीर पंथ' में उद्धृत , पृ.'37

2:–हिन्दी साहित्य में माधुर्य भाव, डॉ. राम चरण शर्मा, पृ.–133 वाष्णेय प्रेस , दिल्ली द्वारा प्रकाशित, सप् 1986

3:–कबीर ग्रंथावली, पृ. 25, सं. 2005 वि. काशी नागरी प्रचारिणी सभा

4:– कबीर संग्रह, सं. सीताराम चतुर्वेदी , पृ. 15

5:– कबीर : व्यक्तित्व , कृतित्व एवं सिद्धांत, पृ. 50

6:–क. , आ. ह. प्र. द्विवेदी, पृ.–159, रा, प्र.नई दिल्ली प. द्वारा प्रका., 1987 ई.

अन्य स्थान पर वे कहते हैं कि रामानन्द के प्रधान उपदेश अनन्य भक्ति को कबीर ने शिरसा स्वीकार कर लिया था । बाकी तत्वज्ञान को उन्होंने अपने संस्कारों रुचि और शिक्षा के अनुसार एकदम नवीन रुप दे दिया था । 1–

इसके अतिरिक्त 'शब्दावली ' में मिल रहे पद में 'रामानन्द ' का उल्लेख है –

कासी में हम परगट भये , रामानन्द चेताये । 2–

बीजक की प्रसिद्ध पंक्ति –

रामानंद रामरस मानै कहै , कबीर हम कहि कहि थाके । 3–

लेकिन कबीर की प्रामाणिक रचनाओं मं रामानन्द का उल्लेख कहीं भी प्राप्त नहीं होता ।

कबीर संप्रदाय में यह जन श्रुति प्रचलित है कि स्वामी रामानन्द स्वामी को अपने शिष्य की कुछ खबर भी न थी । एक दिन वे अपने आश्रम में परदे के भीतर पूजा कर रहे थे ,ठाकुर जी को स्नान कराके वस्त्र और मुकुट पहिरा दिया परंतु फूलों का हार पहिराना भूल गये , इस सोच में पड़े थे यदि मुकुट उतारकर पहिरावे तो बेअदबी है और मुकुट के ऊपर से माला छोटी पड़ती थी कि इतने में बाहर से आवाज आई कि गाँठ खोलकर पहिरा दो । रामानन्द स्वामी चकित हो गये और बाहर निकलकर कबीर साहब को गले लगा लिया ।

दूसरी किवदंती ऐसी भी है कि रामानन्द स्वामी ने एक दिन अपने पिता के श्राद्ध के दिन पिंड करने के लिये कबीर से दूध मँगाया । कबीर साहब जाकर एक मरी गाय के मुंह में सानी डालने लगे । वह तमाशा देख कर उनके गुरु भाइयों ने पूछा कि क्या कर रहे हो ? मरी गाय कैसे सानी खायेगी ।

1:– वही. पृ. 100

2:– क. सा. की शब्दावली , भाग–2 , पृ.– 47, बे. प्रे. प्रयाग द्वारा प्रकाशित

3:– बीजक, बेलबीडियर प्रेस, प्रयाग द्वारा प्रकाशित, पृ.– 58

कबीर साहब ने जबाब दिया जैसे हमारे गुरु जी के मरे पुरखा पिण्ड खायेंगे । रामानन्द धीरे–धीरे कबीर के संपर्क में आकर बाहर मुखी उपासना का खण्डन करने लगे जिसका प्रमाण आदि ग्रंथ में संकलित उनके एक पद से मिलता है :

कत जाईए रे घर लागो रंगु ।।
मेरा चितु न चले मन भइयो पंगु ।।
एक दिवस मन भई उमंग ।।
घसि चंदन चोआ बहु सुगंध ।।
पूजन चली ब्रह्म ठाइ ।।
सो ब्रह्मु बनाइओ गुरू मन ही मांहि ।।
जहां जाईए तहां जल पखान ।।
तू पुरियो है सभ समान ।।
वेद पुरान सभ देखे जोइ ।।
उहाँ तउ जाइये जउ ईहाँ न होई ।
सति गुरु मैं बलिहारी तोर ।।
जिनि सकल विकल भ्रम काटे मोर ।।
रामानन्द सुआमी रमत ब्रह्म ।।
गुरु का सबहु काटै कोटि करम ।। 1 –

रामानन्द स्वामी द्वारा रची हिन्दी रचनाओं के कुछ और पद भी मिलते है। जो इसी भाव को प्रकट करते हैं –

जहाँ जाइये तहाँ जल पषांन ।
पूरि रहे हरि सब समांन ।।
वेद सुमृत सब मेले जोइ ।
उहां जाइये इहां हरि इहां न होइ ।। 2–

1:– आदि ग्रंथ, बसंत, रामानन्द जी, पृ. 1195

2:– रामानन्द की हिन्दी रचनाएँ, पृ.–8

जल पाषांण भरम की सेवा ,भूल–भूल नहीं मरना ।। 1 –

*   *   *

जंत्र–मंत्र नाटक चेटक ये उरले ब्यौहार ।। 2 –

*   *   *

एकादशी करि हिंदू भुल्या ,मुसलमान धरि रोजा।। 3–

रामानन्द स्वामी के अन्य पदों में भी वेद पुराण आदि का खंडन देखने को मिलता है –

वेद पुराने पढ़े आवे पढ़ पढ़ मरम न जाना ।। 4–

*   *   *

अगम निगम है ,पंथ हमारा साषा सार ।। 5–

*   *   *

कहै रामानन्द बच्चा आगम पंथ का मेला ।। 6 –

निर्गुण संतों की सहज साधना को रामानन्द ने भी स्वीकारा है –

सिद्धा सहजें लीनां सहजें दीना सहज सुरति ल्यों लाई ।

सहज सहज धरो कबीर जी बरतन इस विधि करै सगाई ।। 7

*   *   *

सहजै सहजै सब गुन गाहला, । भगवंत भगत एक घिर थाहला । 8–

*   *   *

संतो बंदगी दीदार । सहज उतरो सागर पार ।। 9–

1:–वही, पृ. 28
2:– वही , पृ. 16
3:– वही , पृ. 16
4:– वही, पृ. 35
5:– वही, पृ. 16
6:– वही, पृ. 10
7:– वही, पृ. 14
8:– वही, पृ. 8
9:– वही, पृ. 9, 15

शब्द की महिमा का गान रामानन्द की हिन्दी रचनाओं में देखने को मिलता है–

शब्द को सीख ले शब्द को बूझ ले,
शब्द से शब्द सहज पहचान भाई।
शब्द तो हृदय बसै शब्द तौ नयनों में बसै
शब्द की महिमा चार वेद गाई।। 1–

रामानन्द स्वामी के उपर्युक्त पदों को पढ़ने से कबीर ग्रंथ द्वारा प्रचलित जन श्रुति यथार्थ लगती है । रामानन्द के पदों में हमें कबीर की विचार धारा दृष्टि गोचर होती है । कबीर के सम्पर्क में आने से रामानन्द स्वामी ने वेद पुराण, क्रिया काण्ड आदि की व्यर्थता समझी ,उसे निरर्थक समझा जिसका हम प्रमाण गुरु ग्रंथ साहिब मे संकलित पद में देख चुके हैं।

कबीर के गुरु के मत विषय में विद्वानों का एक वर्ग 2 – निम्नलिखित पद के आधार से शेख तकी को कबीर का गुरु मानते है ।

मानिकपुर कबीर बसेरी।
महदति सुनि सेख तकि केरी। 3 –

लेकिन इस पद में 'सुनो तुकि तुम सेख' पंक्तियों से यह लगता है कि कबीर शेख तकी के शिष्य नहीं हो सकते क्योंकि उपर्युक्त पंक्तियों में तो शेख तकी को कबीर उपदेश दे रहे हैं ऐसा स्पष्ट दिखता है । शेख तकी कबीर को उपदेश नहीं दे रहे है ।

1:– वही, पृ.–9

2:– रे. वेस्टकाट; कबीर एण्ड दी कबीर पंथ, पृ.–25 , मौलवी गुलाम सरवर, खजीबतुल असफिया, 1864 ई.

3:– बीजक, रमैनी, 48

पारस नाथ तिवारी ने निम्न लिखित उक्ति के आधार पर मति सुंदर को कबीर का गुरु माना है । 1–

सोचि विचारिं ,देखो मन माही
औसर आइ बन्यौ रे ।
कहे कबीर सुनहु मति सुंदर
राजा राम रमौ रे ।। 2–

लेकिन यहॉं भी कबीर मतिसुंदर को उपदेश दे रहे है। । अतः मात्र इसी के आधार पर उन्हें कबीर का गुरु नहीं माना जा सकता ।

कबीर के गुरु पीताम्बर पीर थे ऐसा मानने वाला भी एक वर्ग है ,लेकिन स्पष्ट समर्थन किसी के द्वारा नहीं किया गया । अतः पीताम्बर पीर को कबीर का गुरु नहीं माना जा सकता ।

निम्न उक्ति का प्रमाण वे आधार के लिये लेते है–

हज हमारा गोमती तीर।
जहां बसहिं पीताम्बर पीर ।
बाहु बाहु खूब गावना है ।
हरि का नाम मेरे मन भावना है । 3–

1:– डॉ. पारसनाथ तिवारी : हिन्दी अनुशीलन, 10–2, 1959 ई. , महात्मा मति सुंदर लेख

2:– कबीर ग्रंथावली, प्रयाग, पद–135

3:– कबीर ग्रंथावली, पृ. 330, 215

–रचनाएँ –

कबीर की कृतियों की संख्या ,उसका स्वरुप एवं रचना कम निश्चित करने में अनेक विद्वानों ने प्रयास किये है । प्रायः विद्वानों की मान्यता रही है कि कबीर अनपढ़ थे । यह निष्कर्ष उन्होंने निम्न दोहो के आधार से किया है –

मसि कागद छूयो नही ,
कलम गही नहिं हाथ ।
चारिउ जुग को महातम,
मुखहिं जनाई बात।। 1–
* * *
मसि बिनु द्वात ,कलम बिनु कागज।
बिनु अच्छर सुधि होई ।2–
* * *
कबीर सांसा दूरि करु पुस्तक देइ बिहाइ ।
बावन आखर सोधि के हरि चरनी चितु लाइ।।3–

उपर्युक्त पदों में मौखिक या अनुभूत ज्ञान के समक्ष पुस्तकीय ज्ञान की अवहेलना व्यक्त हुई है ,उनके अनपढ़ होनें की स्वीकृत नहीं । लेकिन फिर भी अधिकांश आधुनिक आलोचकों ने कबीर के उपर्युक्त पदों को प्रमाण रखकर यह सिद्ध किया है कि कबीर अनपढ़ थे ।

पं. परशुराम चतुर्वेदी एवं माता प्रसाद गुप्त जैसे विद्वान कबीर को निरक्षर नहीं मानते । इन दोनों विद्वानों के अनुसार कबीर न केवल पढ़े लिखे ,

---

1:– कबीर साहब का बीजक, क. ग्रंथ प्रका.समिति ,पृ. 10

2:– वही , पृ. 15

3:– क. ग्रं. , सलोकु–173, सं. श्यामसुंदर दास

बल्कि सुशिक्षित एवं गहन अध्ययन शील चित्त वृत्ति वाले ,सत्य साधक एवं सर्जक थे । कबीर ने अपनीं पूर्ववती और समकालीन सभी प्रकार की धार्मिक ,आध्यात्मवादी, एवं दार्शनिक कृतियों का गहन अध्ययन किया था । 1—

डॉ. ओम प्रकाश शर्मा भी इस विषय में अपना मत प्रकट करते है कि जो व्यक्ति यह जानता है कि' प्रेम' (परेम नहीं) शब्द ढ़ाई अक्षर का बना है , वह कैसे अनपढ़ हो सकता है ?

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ,
पंडित हुआ न कोय।
ढ़ाई आखर प्रेम के,
पढ़े सो पंडित होय।। 2—

डॉ. राम कुमार वर्मा कबीर को साधरण पढ़े लिखे मानते है ।—

"वे साधारण पढ़े— लिखे हो सकते है क्योंकि अक्षर ज्ञान से संबंध रखनें वाली बावन आखरी उन्होंने लिखी है । 'बावन आखरी' से कबीर के ज्ञान की संभावना हम मान सकते है।" 3—

तुलसीदास जी की रचनाओं को पढ़नें से यह सहज ही पता चलता है कि उन्हें संस्कृत के प्रमुख ग्रंथों का बड़ा गहरा अध्ययन था । वे केवल वेदों, उपनिषदों ,दर्शनों और पुराणों के ही ज्ञाता नहीं थे बल्कि काव्य, नाटक ,छंद शास्त्र , इतिहास ,ज्योतिष, आदि पर भी अधिकार रखते थे । अकेले रामचरित मानस, के चौपाइयों ,दोहों, सोरठों, और छंदों में उन्होंने संस्कृत के सहज और अनेक सैकड़ों श्लोकों का निचोड़ बड़े सहज और रोचक ढ़ंग से भर दिया है । फिर भी उन्होंने बड़ी नम्रता से कहा है : —

1:— पं. परशुराम चतुर्वेदी, ' कबीर साहित्य की परख', पृ. 175/ माता प्रसाद गुप्त, कबीर ग्रंथावली, पृ. 4

2:— क. ग्रं. , काशी नागरी प्रचारिणी सभा, पृ. 39

3:— संत कबीर, प्रस्तावना ,पृ. 9—10, चतुर्थ आवृत्ति, 1957 ई.

कबित बिवेक एक नहीं मोरें ।

सत्य कहउँ लिखि कागद कोरें।। 1—

*   *   *

कबि न होउँ नहीं चतुर कहावउँ।

मति अनुरुप राम गुन गावउँ ।। 2—

तुलसी दास के उपर्युक्त दोहों में उनकी भक्त सुलभ दीनता और गरीबी का भाव दिख पड़ता है । उसका अर्थ यह नहीं कि वे अनपढ़ थे ,वेद शास्त्रों के ज्ञाता नहीं थे । यही बात हम कबीर के संबंध में भी कह सकते है । कबीर ने स्वयं को 'नीच ' कमीना आदि कहा है । यहाँ उनकी नम्रता दृष्टि गोचर होती है।

कबीर की रचनाओं के अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि उनके लिये कविता साधन थी साध्य नहीं । उनमें धार्मिक दृष्टिकोण प्रधान है ,काव्यगत दृष्टि कोण गौण है ।अतः उन्होंने आवश्यकतानुसार भाषा भी बदली है ।

हिन्दी साहित्य के आलोचकों और विद्वानों ने कबीर की रचनाओं के संबंध में काफी छान—बीन की है लेकिन विद्वानों के मत परस्पर विरोधी रहे है ।

कबीर साहब के नाम से प्रचलित रचनाओं की वास्तविक संख्या निर्धारित करना कठिन है । कबीर पंथ के कुछ अनुयायियों का मानना है कि सद्गुरु की वाणियों का कहीं अन्त नहीं है ।

नागरी प्रचारणी त्रैमासिक पत्रिका की संवत 1958 से संवत 2000 तक की खोज रिपोर्टों के अनुसार कबीर कृत रचनाओं की संख्या 130 तक पहुँचती है । किन्तु ये सभी रचनाओं की प्रामाणिकता संदिग्ध है क्योंकि कुछ तो केवल काल्पनिक कथावस्तु के आधार पर है जैसे मुहम्मद बोध, गोरष की गुष्टि आदि।

1:— मानस, 1—8—6

2:— मानस, 1—11—5

श्री विल्सन ने अपने ग्रंथ 'रिलिजस' सेक्टस आव दी हिन्दूज ' में कबीर की आठ रचनाओं का जिक्र किया है –

1–आनन्द राम सागर	5– झूलना
2– बलख की रमैनी	6– कबर पंजी
3– चांचरा	7– कहरा
4– हिंडौला	8– शब्दावली

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ., कबीर बीजक,कबीर ग्रंथावली, कबीर वचनावली, (ना.प्र.सं.) और कबीर दास की शब्दावली के आधार पर ही ग्रंथों की चर्चा की है। 1–

डॉ राम कुमार वर्मा ने 'गुरु. ग्रंथ साहब ' के आधार पर कबीर की रचनाओं का संग्रह किया है । 2–

आचार्य 'परशुराम चतुर्वेदी' नें कबीर साहब की रचनाओं में तीन ग्रंथों की चर्चा की है –

कबीर ग्रंथावली(नागरी प्रचारिणी सभा) , आदि ग्रंथ तथा बीजक। 3–

मेरे विचार से कबीर की निम्न रचनाओं का संकलन महत्वपूर्ण है और दूसरी रचनाओं से उसे अधिक प्रामाणिक कह सकते है । वैसे मूल कृतियों का कोई प्रामाणिक संग्रह अभी तक ऐसा नहीं मिला है जिसके संबंध में कुछ न कुछ संदेह न प्रकट किया गया हो ।

1–आदि ग्रंथ:: – यह कबीर की रचनाओं में महत्वपूर्ण प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है । इस ग्रंथ का संपादन सिखों के पाँचवे गुरु अर्जुन देव जी ने सं. 1661

1:– क., प्रस्तावना, पृ. 29 से 33, राज कमल प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, पाँचवा संस्करण–1987

2:– संत कबीर, प्रस्तावना, पृ. 21–22, चतुर्थ आवृत्ति, 1957, हिन्दी साहित्य प्रेस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित

3:– कबीर साहिब की रचनाएँ, सं. विजयेंद्र स्नातक, पृ. 58–72

वि. में किया । इस ग्रंथों में कबीर के 225 पद और 224 साखियाँ संकलित है । यह ग्रंथ सिखों का धार्मिक ग्रंथ होने के कारण इसके पाठ में कोई परिर्वतन नहीं किया गया है । राम कुमार वर्मा के शब्दों में कहे तो – " यह ग्रंथ सिखों द्वारा 'देव स्वरुप' पूज्य होने के कारण अपने रुप में अक्षुण्ण है और इसके पाठ को स्पर्श करने का साहस किसी को नहीं हो सका । यहाँ तक कि एक–एक मंत्र को मंत्र शक्ति से युक्त समझकर पूर्ववत लिखने और छपने का क्रम चला आया है । 1–

2– बीजक::– यह ग्रंथ कबीर के अनुयायियों के लिये एक आदरणीय तथा परम पूज्य धर्म ग्रंथ है । इसके संग्रह की कोई निश्चित तिथि नहीं ज्ञात है । फिर भी विद्वानों का अनुमान है कि इसमें आई हुई रचनाऍं विक्रम की सत्रहवीं शताब्दी के आस पास की होगी । वेसकट ने बीजक के संबंध में कहा है कि "बीजक कबीर की शिक्षा का प्रामाणिक ग्रंथ मान लिया गया है । यह संभवतः 1570 ई. में या सिक्खों के पॉचवें गुरु अर्जुन देव जी द्वारा गुरु नानक की शिक्षा आदि ग्रंथ में लिखे जाने के बीस वर्ष पहले लिखा गया था । बहुत से वचन जो आदि ग्रंथ में कबीर के कथित माने जाते है ,बीजक में भी पाये जाते है । "2–

कबीर बीजक की भाषा और शैली 'आदि ग्रंथ' और 'कबीर ग्रंथावली' से अलग प्रतीत होती है । "आदि ग्रंथ' और 'कबीर ग्रंथावली' की भाषा पश्चिमी या राजस्थानीं या पंजाबी से मिलती –जुलती है ,जबकि कबीर बीजक की भाषा पुरानीं एवं पूर्वी हिन्दी है । इसमें 84 रमैनियॉं है । रमैनियॉं चौपाई छन्द में लिखी गई है । रमैनियों के अतिरिक्त शब्द और साखी का प्रयोग बीजक में हुआ है । इसके अतिरिक्त इसमें ऐसे अनेक छन्दों अथवा रागों के नाम है जो आदि ग्रंथ ' और कबीर ग्रंथावली ' में नहीं मिलते ।

1:– संत कबीर, पृ. 21, चतुर्थ आवृत्ति, 1957, हिन्दी साहित्य प्रेस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित

2:– कबीर एण्ड द कबीर पंथ, पृ. 7

बीजक के विषय में एक परंपरा है कि कबीर के भगवान दास नामक शिष्य नें 'बीजक' का अपहरण किया था और उन्होंने 'बीजक'को विकृत कर दिया था।1–

बीजक संबंधी उपर्युक्त जन श्रुति ध्यान में रखकर डॉ. आर.एन. शर्मा 'बीजक' को कबीर कृत नहीं मानते । 2–

डॉ. हजारी प्रासद द्विवेदी के अनुसार बीजक कबीर दास के मतों का पुराना और प्रामाणिक संग्रह है । उन्होंने निःसंकोच प्रमाण रुप में अपनी पुस्तक 'कबीर' में व्यवहृत किया है । 3–

3– कबीर ग्रंथावली::–

इसका प्रकाशन बाबू श्याम सुंदर दास जी ने नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से किया है । उन्होंने सं 1561 और सं 1881 में लिखी गई प्रतियों का आधार मानकर कबीर ग्रंथावली का संपादन किया है । दूसरी प्रति में 131 साखियाँ और 5 पद अधिक है किन्तु दोनों में पाठभेद ज्यादा नहीं है । नागरी प्रचारिणी सभा की प्रकाशित पुस्तको में सं. 1561 वाली प्रति का

भगुदास की खबरि जनाई। ले चरण मृत साधू पियाई।
कोऊ आप कह वह कालिंजर गयऊ। बीजक ग्रंथ चौराई ले गयऊ।।
सतगुरु कह वह निगुरा पंथी। कल भयौ लै बीजक ग्रंथी।
चोरी करि वह चोर कहाई। काह भयो बड़ भक्त कहाई ।।
बीज मूल हम प्रकट चिन्हाई। बीज न चीन्हों दुर्मति लाई।।

(महाराज विश्वनाथ सिंह जी, पृ. 24)

2:– कबीर और अखा का तुलनात्मक अध्ययन, पृ. 403, विश्व विद्यालय प्रकाशन , चौक, वाराणसी, प्रथम संस्करण–1983 ई.

3:– कबीर , प्रस्तावना, पृ. 30, पॉचवा संस्करण, 1987 राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली

अन्तिम पृष्ठ का फोटो दिया है । उक्त प्रति के अंत में एक बार 'इति श्री कबीर जी की वाणी संपूरण समाप्त:।। लिखकर और फिर से अपेक्षाकृत मोटे लेख में 'संपूरण' के स्थान पर 'संपूर्ण 'सं. 1561 लिखना संदेहास्पद प्रतीत होता है । इस प्रति में सं. 1561 ,बहुत स्पष्ट लिखा है । ऐसा भी हो सकता है कि संवत् 1561 का लिपि काल जोड़कर इस प्रति को प्राचीन सिद्ध करने का किसी ने प्रयास किया हो ।

प्रो. ज्यूल ब्लाख का यह मानना है कि संभवतः दोनों के लिपिक समकालीन थे । 1–

फिर भी हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार यह प्रति जितनी सुसम्पादित है वैसी कोई और पुस्तक नहीं है । 2–

श्याम सुंदर दास ने 'कबीर ग्रंथावली ' में उपर्युक्त प्रति के पदों के संकलन के अतिरिक्त ग्रंथ साहब में संकलित कबीर के दो पदों का भी परिशिष्ट में संग्रह किया है ।

4– संत कबीर ::– राम कुमार वर्मा जी ने गुरु ग्रंथ साहिब के आधार से सन् 1957 ई. में 'संत कबीर' नामक पुस्तक में कबीर के पद संकलित किये है । उनका यह संग्रह भी प्रामाणिक माना जाता है ।

5– कबीर ग्रंथावली::– पारसनाथ तिवारी ने 'कबीर जी ' की समस्त उपलब्ध हस्तलिखित तथा मुद्रित प्रतियों के पाठ का तुलनात्मक अध्ययन किया है और उन्होंने इस आधार से 'कबीर ग्रंथावली' नामक प्रामाणिक रचना का प्रकाशन

1:– **Some problems of Indian Philosophy-Bulletine of the School of Oriental Studies, London, I.Vol.V and VI, Page 749.**

2:– कबीर ,प्रस्तावना, पृ. 32, पॉचवॉ संस्करण, राजकमल प्रकाशन ,नई दिल्ली,पटना

सन् 1961 ई. में हिन्दी परिषद ,इलाहाबाद, विश्व , विद्यालय द्वारा किया है । इसमें 200 पद और 20 रमैनियाँ तथा 744 साखियाँ संकलित है ।

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी 1– एवं डॉ. सरनाम सिह 2– डॉ. पारसनाथ तिवारी के उक्त संकलन की प्रमाणिकता को अस्वीकार किया है ।

6– **कबीर के पद**::– भक्तों के मुख से सुनकर आचार्य क्षितिमोहन सेन द्वारा शांति–निकेतन से संपादित यह एक अलग प्रकार का संग्रह है । उन्होंने किसी हस्त प्रतिलिपि को आधार मानकर इसका प्रकाशन नहीं किया है । आचार्य सेन संतों की जीवन वाणी को जलती हुई मशाल कहते है और उनका दृढ़ विश्वास है कि ये वाणियाँ यथा समय भारत वर्ष की एवं संसार की समस्याओं को सुलझायेगी ।

7– **कबीर साहेब की शब्दावली**::– बेलबीडियर प्रेस ,इलाहाबाद द्वारा संपादित 'कबीर साहब की शब्दावली ' चार भागों में विभाजित है यह भी कबीर की प्रामाणिक रचना मानी जाती है ।

1– कबीर साहित्य की परख, पृ. 60–61

2– कबीर : व्यक्तित्व , कृतित्व एवं सिद्धान्त,पृ, 124–28

गः– दादू दयाल की संक्षिप्त जीवनीं –जाति ,गुरु एवं रचनाएँ –

भारत के कवियों में दादू दयाल का स्थान अग्रगण्य है । कबीर के बाद हम दादू का नाम रख सकते है। लेकिन कबीर आदि संतों की रचनाओं की तरह ही दादू के जीवन बारे में यथार्थ और प्रामाणिक जानकारी बहुत ही कम मिलतींहैं , क्योंकि वे अक्सर अपने को समाज की मान–बड़ाई से अलग रखते है । इसलिये हमें उनके व्यक्गित जीवन के बारे में विशेष पता नहीं चल पाता । वे नतो अपनी आत्म कथा स्वयं लिखते हैं। और न दूसरों को इसके लिये प्रेरणा देते हैं।

दादू दयाल के संबंध में भी यही बात कही जा सकती हैं । फिर भी उनकी रचनाओं में प्रसंगवश कुछ छिट–पुट घटनाओं का उल्लेख मिलता है , जिससे उनके जीवन से संबंधित कुछ बातों का पता चलता है । दादू दयाल जी के संबंध में अनेक भक्तों और विद्वानों ने उल्लेख किया है जिसमें रज्जब जी, सुंदर दास जी, 1– अखा जी 2– आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ,आचार्य क्षिति मोहन सेन , अयोध्या सिंह उपाध्याय, परशुराम चतुर्वेदी , डॉ त्रिगुनायत ,पंडित सुधाकर द्विवेदी आदि के नाम उल्लेखनीय है ।

किन्तु उनकी जाति ,जन्मतिथि ,गुरु शिक्षा, पर्यटन आदि के संबंध में इन सबका एक मत नहीं है । फिर भी जिन बातों का संकेत उन्होंने स्वयं अपनी रचनाओं में किया है और जिनके लिये उचित प्रमाण मिलते है तथा जो बातें परंपरा और जन श्रुति पर आधारित होने के के साथ ही युक्ति संगत मालूम

1–दादूजी जब घौसह आए,बालपने हम दरसन पाए ।
तिनि के चरननि नायो माथा,उन दीयौ मेरे सिर हाथा ।
स्वामी दादू गुरु हैं, मेरो सुन्दरदास शिष्य निमि केरौ ।।
(हरिनारायण शर्मा, सुन्दरदास , पृ. 59)

2–चमार जुलाहा नाई धुनिया , दादूरी दास, रैदास सेना कबिराई ।
(अक्षयरस, संत प्रिया, छन्द–21, ले. कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह, म. स. वि. बड़ौदा द्वारा प्रकाशित , सन् 1963 ई.)

होती है ,उनके आधार पर दादू जी के जीवन को यहाँ संक्षिप्त रुप – रेखा दी जाती है ।

–दादू की जातिः:–

जहाँ तक कि दादू दयाल की जाति का प्रश्न है इस संबंध में विद्वानों के मत एक नही है । फिर भी यह प्रश्न इतना विवादास्पद भी नहीं है।

दादू के जन्म के संबंध में कबीर के जन्म के समान ही जन श्रुति प्रसिद्ध है ।

अहमदाबाद के लोधीराम नागर ब्रह्मण जो रुई के व्यापार का पेशा करते थे, कोई पुत्र नहीं था । वे बड़ी तत्परता के साथ अपने धर्मिक कृत्य करते थे और जो साधू महात्मा मिलते उनकी बड़ी आवभगत के साथ इस आशा से सेवा करते कि वे उनकी पुत्र की अभिलाषा पूर्ण करेंगे । एक दिन एक महात्मा उनके पास आये और लोधी राम कीसेवा भक्ति से प्रसन्न होकर उनसे बोले –"तुम नित्य की भाँति कल सुबह साबरमती में स्नान करने जाना। वहीं भगवत् कृपा से तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी । दूसरे दिन प्रातः काल लोधी राम जब नदी में स्नान करने गये तो उन्हें नदी के प्रवाह में बहते हुये कमल दल समूह पर एक बच्चा मिला तथा उनके आश्चर्य ओर खुशी का ठिकाना न रहा । * वे बड़े ही प्यार से बच्चे को घर ले आये उनकी स्त्री बच्चे को देखकर फूली न समाई । कहा जाता है किजैसे ही उसने बच्चे को अपने गोद में लिया उनके स्तनों में दूध भर आया ।

दादू संप्रदाय और इन्साक्लोपीड़िया आफ. रिलीज़न एण्ड एथिक्स' के मता नुसार दादू को लोधी राम नामक ब्राह्मण का पुत्र बतलाया है । 1–

---

* यह कथा कबीर जी की उत्पत्ति कथा से बहुत मिलती जुलती है । कबीर साहेब के बारे में भी कहा जाता है कि उन्हें बच्चे के रुप में काशी से लहरतारा नामक तालाब पर निरु जुलाहे ने पाया था और उनका पोषण किया था

1:– भाग–4 पृ. 385

दादू दयाल के शिष्य रज्जब के अनुसार दादू जन्म से मुसलमान थे और उनका पेशा धुनियाँ (रुई धुनने वाले) का था –

"धुनि गर्भे उत्पनों, दादू योगेन्द्रो महा मुनिः ।
उत्तम जोग धारनम् ,तस्मात् क्यं न्याति कारणम् ।। 1

दादू के दूसरे प्रसिद्ध शिष्य छोटे सुंदर दास ने भी दादू के लिये 'पिंजरा' शब्द का उल्लेख किया है । 'धुनिया ' पिंजरा शब्द का हिन्दी पर्याय है।

एक पिंजारा ऐसा आया,
रुह रुई पिंजण के कारण
आपण राम पढ़ाया।
पींजण प्रेम मुकिया मन को ,
लय की तांती लपाई ,
धुनुहि ध्यान बंध्यो अति ऊँचो
कबहूँ छूटन जाई ।
जोइ जोइ निकट पिजावण आवे,
रुई सबनकी पींजे ,
परमारथ को देह धर्यो है
सम्यक कछु ही लीजे ।
बहुत से रुई पींजी बहु बिधि कर ,
मुदित भइ हरिराई ।
दादू दास अजब पींजरा
सुंदर बलि बलि जाई ।

1:– रज्जब जी की सर्वांगी , साधु महिमा को अंग, हस्तलिखित, दादू महा वि., जयपुर

जन गोपाल ने दादू के पेशे के संबंध में लिखा है कि दादू दयाल ने आमेर में कुछ दिनों तक 'धुनकरी ' का काम किया था और इस कार्य उन्होंने अपने पास बढ़ती हुई भीड़ को हटाने के उद्देश्य से तथा परिश्रम से प्राप्त किये गये अन्न का उपयोग करने के लिये किया था । जन गोपाल ने यह भी कहा है कि दादू दयाल का इस प्रकार का कार्य करना उसी प्रकार का था जैसा कबीर का ,कबीर ने अपने आस पास की अनावश्यक भीड़ हटानें के लिये गणिका को अपने साथ लेकर खुले में निकले थे :

ज्यो कबीर गनिका संग लीनी।

वैसे स्वामी रुई पीनी ।। 1–

इसके अतिरिक्त संवत 1922 में लिखे गये फारसी ग्रंथ 'दबिस्तान'ए–मजाहिब' में दादू जी की जाति को 'नदक' (रुई पींजनें वाला) कहा है और दादू को 'नाद्दाक' 'पींजरा' होने का उल्लेख किया है । 2–

मोहसीन फानी भी उन्हें धुनिया मानते है । 3– स्वामी दयानन्द के अनुसार दादू 'तेली' थे । 4–

पंडित सुधाकर द्विवेदी इन्हें बनारस का मोंची सिद्ध करने का प्रयास करते है। इनका नाम 'महावली' बताते है। 5– इसके प्रमाण में द्विवेदी जी दादू जी की निम्न पंक्तियाँ उद्धृत करते है। ।

दादू मोट महाबली, घट घृत मथकर खाय । 6–

1:– श्री दादू जन्म लीला परची, पृ. 35–8

2:– डॉ. और : 'ए सिक्सटीन्थ सेंचुरी मिस्टिक'(1947) पृ. 47,अध्याय–12

3:– हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डॉ. राम कुमार वर्मा, पृ. 391

4:– सत्यार्थ प्रकाश, सटिप्पण : विरजानन्द, पृ. 326, संस्करण, सं.2016 वि.

5:–दादू दयाल का शब्द, भूमिका, पृ.–1

6:– दादू दयाल की बानी, भाग–1, गुरुदेव को अंग–साखी–34, बेलबीडियर प्रेस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1984 ई.

इसी आधार पर वे कहते हैं कि दादू पानीं खींचने के लिये चमड़े की मोट सीने वाले महाबली नामक मोची थे ,परंतु आधुनिक विद्वानों के अनुसार यह मत बिल्कुल अमान्य है । परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार 'मोट' शब्द का अर्थ यहाँ कैसे मोची हो गया ,यह बात समझ में नहीं आती और 'महाबली' का वास्तविक संज्ञा होना अन्य किसी रचना में सिद्ध नहीं होता । 1–

मध्य युगीन भारतीय रहस्यवाद के विद्वान क्षिति मोहन सेन उन्हें मुसलमान मानते हैं । सेन के अनुसार दादू का प्ररम्भिक नाम 'दाऊद' था उनकी पत्नीं का नाम हब्बा था , और उनके दो पुत्र और दो पुत्रियाँ थी । 2–

डॉ. बडथ्वाल 3 , परशुराम 4. हजारी प्रसाद द्विवेदी 5,आदि विद्वान दादू को धुनिया मानने के पक्ष में है ।

मुहम्मद और हदीस की चर्चा दादू वाणी में आने के कारण श्री भुवनेश्वर दादू को मुसलमान मानते हैं । 6 –

अधिकांश मध्यकालीन भक्त एवं आधुनिक विद्वानों नें दादू को "धुनिया " कहा है, इसी लिये दादू दयाल को धुनिया मानना ही अधिक उचित है । वैसे दादू दयाल ने भी कबीर के समान ही धर्मों की समस्त जाति–पाँति एवं वाह्याडम्बरों का विराध किया है ।

जे पहुँचे ते कहि गये, जिनकी एकै बात।
सबै सयाने एकमति, तिनकी एकै जात।। 7 –

1:–उत्तर भारत की संत परंपरा. पृ.–411

2:–दादू उपक्रमणिका, पृ. 17

3:– हिन्दी काव्य में निर्गुण संप्रदाय, पृ. 72

4:– उत्तर भारत की संत परंपरा, पृ. 411

5:– 'दादू' लेख–'विशाल–भारत' दिसंबर, 1935 संकलित, विचार और वितर्क , पृ. 116, संस्करण सं. 2002 वि.

6:– ' संत साहित्य', पृ. 37

7:– दादू वाणी, मंगल दास, साखी–172, पृ. 242

—::दादू दयाल,गुरु::—

दादू दयाल ने स्वयं अपनी रचनाओं में कही पर भी अपने गुरु का नाम नहीं लिया है ,लेकिन 'गुरुदेव को अंग' में उनकी निम्न साखी है जिसमें कहा गया है कि गुरु ने उनको प्रथम दर्शन अलख पुरुष के रुप में दिए थे ।

दादू गैब मांहि गुरुदेव मिल्या,
पाया हम परसाद ।
मस्तक मेरे कर घर्‌या,
दष्या अगम अगाध ।। 1—

दादू पंथियों की परंपरा के अनुसार दादू अपने गुरु 'वृद्धानन्द' (बूढ़न) से ग्यारह वर्ष की अवस्था में मिले ,जबकि वे अपने मित्रों के साथ कांकरिया तालाब पर खेल रहे थे । उस वृद्ध पुरुष के भव्य और गंभीर व्यक्तित्व को देख कर अन्य बालक जो भाग गये , पर दादू आदर पूर्वक उनके पास गये और अपने पास एक पैसा था वह दे दिया । वे महात्मा दादू की सरलता , निश्छलता और श्रद्ध भाव से प्रसन्न हुये । उन्होंने दादू को प्रसाद दिया और कृपा पूर्वक उनके सिर पर अपना हाथ रखा जिससे दादू के शरीर में रुहानियत की एक लहर दौड़ गयी । सात वर्ष बाद जबकि दादू अठ्ठारह वर्ष के थे ,उन्हें वृद्धानन्द ने फिर दर्शन दिया । 2— दादू अब परिपक्व अवस्था में आ गये थे इस लिये उन्हें गुरु द्वारा इस गूढ़तम रहस्य को राजस्थान में जाकर प्रचार करने की आज्ञा मिली ।

1:— दादू दयाल की बानी, भाग—1, गुरु देव को अंग, साखी—3, बेलबीडियर प्रेस इलाहाबाद, द्वारा प्रकाशित सन् 1984 ई.

2:—" तीजे पहर निकट की संझा। खेलन डोले लड़कन मेझ।
जब बीते एकादस बरसू । बुड़ढ़े—रुप दियो हरि दरसू।।
(दादू जन्म लीला परची, पृ.—11)

दादू के शिष्य सुंदर दास ने भी उक्त घटना का उल्लेख अपनी ग्रंथावली में किया है । 1—

इसके अतिरिक्त एक और जन श्रुति के अनुसार दादू दयाल छोटे थे तब वृद्धानन्द या बुड्ढन नें सॉभर में ही दर्शन देकर उनके मुख में पान की पीक दी थी —

सॉभर में सद्गुरु मिला, दी पान की पीक ।
बुड्ढन बाबा यूँ कही ,ज्यूँ कबीर की सीख ।। 2—

कुछ विद्वानों के मतानुसार दादू के गुरु शेख बूढ़न थे जो कादरी शाखा के एक सूफी महात्मा थे और जो दादू की युवावस्था के प्रारम्भिक काल में जीवित थे । शेख बूढ़न अकबर के समकालीन (1545—1605) थे और उनके वंशज अभी भी जयपुर के पास सांभर में पाये जाते हैं ।

क्षिति मोहन सेन ने बुड्ढन या वृद्धानन्द को दादू का गुरु बताया है । 3— डॉ. राम चन्द्र मिश्र कबीर को दादू जी का गुरु बताते है । 4— डॉ. त्रिगुनायत ने दादू के गुरु को कबीर के पुत्र कमाल को ही माना है रामानुज —राघवानन्द —रामानन्द—कबीर—कमाल— दादू । 5—

डॉ. विल्सन कबीर पंथ के शिष्यों को ही दादू संप्रदाय के जन्मदायक मानते है —

1— कबीर, 2— कमाल, 3— जमाल, 4—विमल, 5— बुड्ढन, 6—दादू,—6

1:— सुदर ग्रंथावली, भा. पृ. 198

2:—दादू उपक्रमणिका , पर उद्धृत, पृ.—35

3:— क्षितिमोहन सेन 'दादू' , पृ.3

4:— हिन्दी पद—परंपरा और तुलसी दास, पृ.—100 संस्करण 1962

5:— शास्त्रीय समीक्ष के सिद्धांत, भाग'2 , पृ. 104 संस्करण 1956

6:—' स्कैच आन दी रिलीजियर्स सैक्ट ऑफ द हिन्दूज' पृ. 103

तासी साहब भी दादू के गुरु बुड्ढन को कबीर पंथी साधू मानते हैं और उन्होनें उसी रामानन्द की शिष्य परंपरा में दादू जी को छठी पीढी का स्वीकारा है । 1–

इस प्रकार अधिकांश आधुनिक आलोचकों के अनुसार जन श्रुतियों द्वारा प्रचलित एवं सुंदरदास के अनुसार दादू के गुरु 'वृद्धानन्द' या 'बुड्ढन' है । अतः जब तक कोई प्रमाण न मिले तब तक दादू के गुरु के रुप में 'वृद्धानन्द' या बुड्ढ़न को मानना ही उचित है ।

—:रचनाएँ::—

दादू दयाल ने सर्वप्रथम सांभर में रहने के बाद लिखना चालू किया । तब उनकी आयु करीब 20–30 के आस पास की मानी जाती है ,और उस समय तक उन्होंने आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त कर लिये थे । वहाँ उनकी आध्यात्मिक प्रतिभा से प्रभावित होकर कई लोग आध्यात्मिक जिज्ञासा की तृप्ती के लिये उनके पास आते थे । दादू जी उन जिज्ञासुओं को कभी–कभी पद्य में उत्तर देते थे और ज्ञेय होने के कारण इन पद्यों को उनके शिष्यों द्वारा कंठस्थ कर लिया जाता था । इन पद्यों को सर्व प्रथम संग्रहित करने का काम दादू जी के निकठस्थ शिष्य मोहन जी 'दफतरी' ने किया था । 2 –

मोहन जी दफतरी के बाद दादू वाणी को व्यवस्थित रुप देने का यश रज्जब जी, जगन्नाथ दास , एवं संतदास को कहा जाता है , वे दादू के निकटवर्ती शिष्यों में से थे । 'दफतरी' ने दादू के जिन पद्यों का संग्रह किया

1:– इस्त्वार द ला लितराव्यूर एनदई ए हिन्दूस्तानी का हिन्दी अनुवाद : हिन्दुई साहित्य का इतिहास : अनुवाद – डॉ. लक्ष्मी नारायण वैष्णव, पृ. 107

2:– रजत जयंती ग्रंथ, पृ. 9

था उसी को जगन्नाथ दास एवं संतदास ने व्यवस्थित रुप में प्रकट किया और उसे 'हरडे –वाणी' कहा गया । लेकिन 'हरडे वाणी 'में विषयानुसार पदों का विभाजन नहीं किया गया था और न शीर्षक दिये गये थे ।

रज्जबी ने 'अंगबंधु ' नामक अपने ग्रंथ में उक्त वाणी को विषयानुसार शीर्षक दिये और उपर्युक्त दोष को दूर किये । ('समय संवत 1700 के आस पास')

इसके अतिरिक्त रज्जबी का 'सर्वगी ' तथा जगन्नाथ दास का 'गुण गुंजरनामा' ऐसे संग्रह है जिसमें भाव साम्य के आधार पर दादू जी की साखियॉ के साथ साथ कबीर आदि की संतों की साखियाँ दी गई है ।

दादू पंथियों के अनुसार दादू दयाल की वाणियों की संख्या बीस हजार की है । आचार्य क्षिति मोहन की सेन के अनुसार दादू के शिष्यों द्वारा संकलित वाणियों की संख्या अधिक से अधिक पॉच हजार से ऊपर नहीं जा सकती और इसमें कोई भी पदों और साखियों में पुनुरुक्ति पाई जाती है । 1–

दादू दयाल की वानियॉ अधिकांश पद्यों और साखियों के रुप में मिलती है ।

संत दादू दयाल के प्रकाशित संग्रह ग्रंथ निम्न प्रकार के है ।

1– दादू दयाल का बानी–

नागरी प्रचारिणी ग्रंथ माला सिरीज नं. 11 के आधार से सुधाकर द्विवेदी द्वारा प्रकाशित यह संग्रह सन 1906 ई.में प्रकाशित हुआ ।

द्विवेदी जी के द्वारा ही सन् 1907 में नागरी प्रचारिणी सभा ग्रंथ माला ,सीरीज नं. 14 के आ॒धार पर दादू दयाल का सबद नामक संग्रह प्रकाशित हुआ ।

1:– दादू, पृ. 164–6

2– श्री स्वामी दादू दयाल की बाणी –

यह संग्रह का संपादन सं. 1964 में वैदिक यंत्रालय अजमेर से पं. चन्द्रिका प्रसाद त्रिपाठी द्वारा हुआ । यह संग्रह भी दो भागों में प्रकाशित हुआ । प्रथम भाग में साखियाँ और द्वितीय भाग में 'सबद' दिये गये लेकिन दोनों भागों को श्री स्वामी दादू दयाल की वाणी नामक एक ही ग्रंथ में संपादित किया । यह ग्रंथ को प्रामाणिक बनाने के लिये त्रिपाठी जी ने आठ पुरानीं हस्त लिखित पुस्तकों से तथा बीस वर्ष के श्रम के अनन्तर एवं अन्य पंडितों के साथ लेकर तैयार किया गया है ।

लेकिन बापू बालेश्वरी प्रसाद इस ग्रंथ में प्रामाणिक रचना का अभाव पाते है। 1–

3–दादू दयाल की बानी–

यह संस्करण सं. 1975 में 'जेल प्रेस ' जय पुर से निकाला है । इसमें संपादक का नाम नहीं छपा है ।

4– दादू दयाल की बानी– यह संस्करण बेल बेडियर प्रेंस प्रयाग से सन् 1928 ई.(संवत 1985) में प्रकाशित हुआ है । इसे तैयार करने के लिये काशी ,लाहौर , एवं अजमेर में छपी तीन पुस्तकों की सहायता ली गयी है ।

5– सटीक श्री दादू दयाल की बानी –

यह संस्करण सन् 1951 ई. में 'मंगल प्रेस जय पुर ' से श्री मंगल दास जी के द्वारा संपादित हुआ है । श्री स्वामी मंगल दास जी ने इस संस्करण के आधार के रुप में पं. चन्द्रिका प्रसाद त्रिपाठी द्वारा संपादित संग्रह का अनुकरण मात्र किया है । उन्होंनें स्पष्टता भी की है कि 'शीघ्रता ' के कारण मूल पाठ राय साहब चन्द्रिका प्रसाद जी के संस्करण से

1:– दादू दयाल की बानी ,भाग–1 , पृ.–6, बेलबीडियर प्रेस इलाहाकाब द्वारा प्रकाशित, सन् 1984 ई.

लिया गया । तथा इस मूल पाठ में जो त्रुटियॉ उस समय रही थी वे इस संस्करण में भी रह गई । 1 –

6– 'श्री दादू वाणी' , सटीक–

स्वामी नारायण दास जी ने संवत 2018 में अजमेर से इस संस्करण को प्रकाशित किया । स्वामी मंगल दास द्वारा संपादित वाणी में कई स्थानों पर पुनुरुक्ति पाई जाती है यह त्रुटि स्वामी नारायण दास जी ने दूर की । उन्होंने एक से ज्यादा बार आने वाली लगभग 100 साखियों को इस संग्रह में नहीं लिया ।

7– महर्षि श्री स्वामी दादू दयाल जी महराज की अनभै –वाणी–

इस संस्करण का संपादन जय पुर के स्वामी जीवानन्द भारत भिक्षु ने किया । यह संस्करण 'श्री दादू सेवक प्रेस , जयपुर से सं. 2003 में तीन खण्डों में प्रकाशित हुआ । इस संस्करण की भूमिका में बताया है कि इसमें महा प्रभु के गूढ़ पद्यात्मक आत्मानुभवों को गद्यात्मक अनुवाद करने का प्रयत्न किया है । और इस संस्करण के संपादन में भिन्न–भिन्न प्राचीन टीका ग्रंथों की सहायता ही प्रधान रही है । 2–

8– दादू दयाल की बानीं –

यह बेलबीडियर प्रेस ,इलाहाबाद द्वारा दो भागों में प्रकाशित है । यह भी दादू जी को प्रामाणिक रचनाओं का संग्रह माना जाता है ।

1:– ' दादू दयाल की बानी', मंगल दास स्वामी, निवेदन', पृ.–31

2:– ' अनभैवाणी' (भारत सिंधु संस्करण :) भूमिका, प. 13–15

घः– अखा की संक्षिप्त जीवनी –जाति ,गुरु एवं रचनाऍं ::–

यह एक प्रसिद्ध कहावत है कि कथा –साहित्य में नामों और तिथियों को छोड़ कर सब कुछ यथार्थ होता है और इसके विपरीत इतिहास में तिथियों और नामों को छोड़ कर सब कुछ गलत होता है । परंतु आश्चर्य की बात है कि जब हम अखा के जीवन पर विचार करते हैं तो हमें पता चलता है कि उनके जीवन की प्रमुख घटनाओं के बारे में कोई विशेष मत भेद नहीं है ,पर तिथियों और नामों के बारे में प्रयत्न करने पर भी हमें एक मत प्राप्त नही होता है।

अखा का नाम नामदेव ,कबीर, नानक , दादू आदि महान संतों के साथ निःसंकोच रुप से जोड़ा जा सकता है ।

कबीर एवं दादू दयाल की तरह परवर्ती संत भक्तों ने आदर के साथ अखा का नाम उल्लेख किया है ।

'वस्ता विश्वम्भर' ने 'अमरपुरी गीता' (वि. सं.1831) की रचना की । उस रचना में उन्होंने अखा को एक ऐसा वृक्ष कहा है जो हमेंशा नीचे रहने वालों को शीतलता का अनुभव कराता है ।

अखो पुरुष एक वृक्ष छे , निरंतरमां छाये।
सदा शीतल निवास ते को काले तपे नाये । 1–

अखा की शिष्य परंपरा के अंतिम संत भगवान जी महाराज (वि.सं. 1929 से 2016) नें अखा का उल्लेख किया है :

"अक्षय पदना वासी अखा जी ओम गुरु ।
ब्रह्मसदनना भोगी जोगीराज जो ।।" 2–

1:– अखो अने मध्यकालीन संत परंपरा, डॉ. योगीन्द्र त्रिपाठी, वस्त्रो विश्वंभर, पृ.–263

2:– श्री अखाजीनी साखिओ : संपादक केशवलाल ठककर, सं.–2008, श्री गुरुचरणे स्तुति

इसके अतिरिक्त संत श्री मोतीराम ,भाणा साहब, आदि संतों नें नरसिंह मेहता ,मीराबाई , नाम देव, कबीर, दादू आदि के साथ अखा का नाम अनेक बार आदर के साथ लिया जाता है । 1–

दादू कबीर नानक नामा ने बहुविधि महिमा गाई हॉं ।

भाण रवि लक्ष लही देवा साहिबा अखा प्रकाश भये भाई हॉं ।। 2–

भोजा भगत ने (सं. 1841–1906) भी अखा का उल्लेख किया है :

अखा जी वारे उतावलो ,तु रघुनाथ धायो ।। 3–

श्री करुणा शंकर (सं.1874 वि.) सारसा वाले ने कबीर एवं अखा को ब्रह्म स्वरुप प्राप्त संत कहा है :

अखा कबीर आधे जेटला । अयं ब्रह्म अस्मि तेटला । 4–

उपर्युक्त बाह्य साक्ष्यों के अध्ययन से हम इस निर्णय पर आ सकते हैं कि अखा , कबीर दादू आदि संतों की भॉंति ही उच्चकोटि के संत थे । लेकिन अखा के जीवन की जानकारी के लिये उपर्युक्त बाह्यसाक्ष्य काफी नहीं है । अखा के जीवन का परिचय जन श्रुतियों का आधार है । उसके आधार पर हम यहॉं अखा के जीनव संबंधित संक्षिप्त रुप रेखा देखें ।

अखा का जन्म अहमदाबाद की दक्षिण की ओर 19 मील की दूरी पर जेतल पुर नामक गॉंव में हुआ था । अखा के पिता रहियोदास सुनार का

1:– 'संतोनी वाणी', सं. भगवान जी महाराज, संवत 1976, वाणी विभाग पृ.1,2,3

2:– श्री शब्द सागर, पृ. 250

3:– प्राचीन काव्य माला, भाग–5, पृ. 50

4:– अगाध बोध, पृ. 17

व्यवसाय करके अपने परिवार का निर्वाह करते थे । इस बात की पुष्टि अधिकांश विद्वानों ने की है ।

कुछ समय बाद अखा के पिता रहियोदास अपने परिवार के साथ अहमदाबाद की देसाई पोल में आकर बसे थे । यहाँ आने के कुछ समय के बाद अखा के पिता,बहन और पत्नी का स्वर्गवास हो गया । कहा जाता है कि अखा ने दूसरा विवाह किया था लेकिन दूसरी पत्नी का भी स्वर्गवास हो गया । ऐसे दुःखद प्रसंगों के कारण अखा को संसार असार लगने लगा । 1–

इसके अतिरिक्त अखा के संसार त्यागने के पीछे उसके भावुक हृदय को ठेस पहुँचाने वाले अन्य प्रसंग भी माने जाते हैं ।

अपनी धर्म की बहन, ने अखा पर सोने के हार बनाने में सोने में मिलावट की है ऐसी आशंका के कारण अखा के हृदय को बहुत आघात पहुँचा ऐसी जन श्रुति है ।

बादशाह जहाँगीर के टकसाल में अखा उच्च पदाधिकारी थे । कुछ षड्यंत्र कारियों ने अखा के खिलाफ सिक्कों में अन्य धातु का मिलावट का आक्षेप किया । सदा सत्य निष्ठ और प्रामाणिक अखा के मन को आघात पहुँचा । कहा जाता है कि ऐसे दूषित सांसारिक वातावरण से ऊबकर अखा ने संसार त्यागा और परमार्थ प्रप्ति के लिये निकल पड़े ।

अखा जाति::–

कबीर ने अपनी रचनाओं में अनेक स्थान पर जुलाहा जाति का उल्लेख किया है । अतः उनकी उनकी जाति के संबंध में कोई संदेह को स्थान नहीं है। अधिकांश आधुनिक विद्वानों नें कबीर को जुलाहा माना है । अखा ने

1:– अखा कृत काव्य, –1, पृ. 3

भी अपनी रचनाओं में अनेक स्थान पर 'सोनारा' शब्द का उल्लेख किया है । अतः अखा के सोनी होने में कोई संदेह नहीं है । सभी आलोचकों ने उन्हें सोनी माना है।

लेकिन विद्वानों का एक वर्ग अखा को 'श्री माळी सोनी' माना है ,और एक वर्ग 'परजियो सोनी' मानता है ।

अखा के वंश अहमदाबाद में रहते है वे भी स्वयं को श्रीमाळी सोनी बताते हैं।

स्व. डाह्या भाई पंडित अखा को 'श्रीमाळी सोनी ' मानते है । 1– डॉ. रामण भाई पाठकभी अखा को श्रीमाळी सोनी' मानने के पक्ष में है । 2–

श्री के. का. शास्त्री अखा को 'परजियो सोनी' मानने के पक्ष में है । 3– उमाशंकर जोशी ने अखा को परजियो सोनी' मान है। । 4–

मेरे विचार से अखा अखा 'श्री माळी सोनी' था क्योंकि अहमदाबाद में रह रहे वंशज अभी भी स्वयं को 'श्रीमाळी सानी' ही बताते है।

अखा गुरु ::–

कहा जाता है कि गुरु प्राप्ति के लिये उस समय प्रचलित सभी पंथों में जाकर तालाश की थी । लेकिन उन्हें कहीं पर भी सच्चाई देखने को न मिली

1:– कवि चरित

2:– अखो एक स्वाध्याय, पृ. 35, 'सागर' प्रकाशन ट्रस्ट, बड़ोदा द्वारा प्रकाशित सन् 1976 ई.

3:– 'साहित्यकार अखो' में संकलित प्रो. के. का. शास्त्री का लेख–'अखो भक्त', पृ. 3, प्रेमानन्द साहित्य सभा, बड़ोदा द्वारा प्रकाशित, सन् 1974

4:– अखो एक अध्ययन, पृ. 13, सहायक मंत्री, अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1973

गोकुल जाकर उन्होंने 'गोकुल नाथ' को गुरु के रुप में स्वीकारा । लेकिन उसे वहाँ भी संतोष न मिला –

"गुरु कार्या में गोकुल नाथ, नगुरा मनने घाली नाथ ,
मन मनावी सगुरो थयो , पण विचार नगुरानो–नगुरो रहयो । 1–

गोकुल से अखा सद्‌गुरु की खोज में काशी गये लेकिन वहाँ भी मानसिक तृप्ति न हुई । अंत में काशी में ही मणिकर्णिका घाट के उपर झोपड़ी में एक ही शिष्य को वेदांत का अभ्यास कराते संन्यासी पर अखा की दृष्टि पड़ी। अखा उस झोंपड़ी के पीछे बैठ कर प्रतिदिन श्रवण करने लगे । इस तरह वे एक साल तक सुनते रहे । अखा को विश्वास हुआ कि गुरु के योग्य यही संन्यासी है पर उनके सामने प्रकट होने में अखा झिझक रहे थे । संयोगावशात् ऐसा हुआ कि वह सन्यासी उपदेश दे रहे थे और शिष्य के नींद आने के कारण वह हुँकार न दे पाया । तब झोंपड़ी पीछे बैठे अखा हुँकार भरने लगे । कुछ समय बाद सन्यासी का ध्यान शिष्य को निद्रा सुख लेते देखा और दूर से आ रही हुँकार सुनी । वे जिज्ञासा वश बाहर निकले । अखा ने जो साल भर सुनाया था उसे संक्षिप्त में सुनाया । गुरु को अखा के ज्ञान पर विश्वास हुआ और अखा को गुरु रुप में दिक्षा दी और शिष्य के रुप में स्वीकारा । इसी घटना का उल्लेख श्री कृष्ण लाल माहन लाल झवेरी तथा दीवान बहादुर नर्मदा शंकर,देव शंकर मेहता ने भी किया है । 2 –

गुजरात के आवार्चीन संत महात्यमराम ने भी अखा के रुप में ब्रह्मानन्द का उल्लेख किया है ।

1:– जुनू नर्म गद्य, पृ. 458

2:– अः– श्री कृष्णलाल मोहन लाल झवेरी, ' माइल–स्टोन्स–इन गुजराती लिटरेचर' पृ. 76–77

बः–दिवान बहादुर नर्मदा शंकर देवा शंकर मेहता, 'अखा कृत काव्य' , भाग–1 , पृ. 15

"अखा नरहर बूटा गोपाला , ए च्यौं ब्रह्मानन्द के बाला।" 1–

'सागर नौ विचारण' नामक पुस्तिका में सागर महाराज ने अखा के गुरु के रुप में ब्रह्मनन्द का उल्लेख किया है –

Amongest G ujarati; Bhaktas Norsimha, Pritam, Akha and Mirabai and many others are realised solus. they have reached the gool through the path of Devotion Akha received the following Mantra from Guru Brahmanada;

ॐ कार ब्रह्म ,निराकार राम,
काया काशी ,हृदये स्नान
ज्योतिस्वरुप आत्माध्यान, तत्वनिरंजन राम
त्रिभुवन व्यापी, तारक राम, तन त्रिवेणीन्हावुँ,
"सोहं ब्रह्ममां समावुं"ॐ, । 2–

इसके अतिरिक्त कबीर की भाँति अखा ने भी अपनी रचनाओं में 'गुरु' का उललेख अनेक स्थानों पर किया है:

ओम् ब्रह्मानन्द स्वामी अनुभव्या रे।
मने भास्यु छे ब्रह्मकार। 3–

सद्गुरु जी अे सानमा समजाव्युं सुख अपार।
ओम ब्रह्मानन्द स्वामी अनुभव्या रे ,मने भास्यु छे ब्रह्मकार। 4

1:– महातम ज्ञान प्रकाश, पृ. 8

2:– सागराश्रम ग्रंथमाला, पुष्प–6, के रुप में सागर नी विचारणा का तृतियांक का आरंभिक पृष्ठ

3:– गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी, ग्रंथ भण्डार की हस्त प्रत–संख्या–756

4:– गु. वि. स., हस्त प्रत–753

सद्गुरुजी नी संगत करिये ,मन कम वचन तनमय धरिये ।

ब्रह्मानन्द निज सुख अनुसारिये तो मोटो महिमा गुरु देवनो ।1–

अतः अखा के गुरु के रुप में ब्रह्मानन्द को मानना ही अधिक संगत है ।

1:– अ. वा., पद 114, पृ. 94

रचनाएँ::—

कबीर एवं दादू दयाल का कविता रचने का जो उद्देश्य था वही अखा का भी था । अखा प्रसिद्धि नहीं चाहते थे । कविता उनके लिये एक साधन मात्र थी साध्य नही ।

आत्म लक्ष अंग में कविता संबंधित उनके विचार दृष्टव्य है ।

अखो शुं कवितापणुं कहे , जो बात कशी न पहोंचे सरे?
के लेवुं के मूकवु कहे , ते तां सर्व अहरेरुं रहे । 1—

अखा की कृतियों की संख्या और रचना के संबंध में अनेक विद्वानों ने प्रयास किये है । इस विषय में श्री नर्मदाशंकर, देवशंकर मेहता , 2 श्री कृष्ण लाल झवेरी ,3 सागर महाराज, 4 श्री कन्हैयालाल मुंशी, 5 श्री के. का. शास्त्री , 6 डॉ. उमाशंकर जोशी 7, डॉ. कुवर चंद्रप्रकाश सिंह, 8 डॉ. रमण भाई पाठक 9, एवं डॉ .आर.एन. शर्मा 10 , के प्रयास उल्लेखनीय है ।

डॉ. रमण भाई पाठक ने अखा की निम्न कृतियों को प्रामाणिक बताया है । 11

1:— 35—आत्म लक्ष अंग, छप्पा—343

2:— अखो—पृ. 17

3:— गु. सा. मा. सू. स्त. व. मा. सू. स्त., पृ. 70

4:— अप्रसिद्ध अक्षयवाणी : प्रस्तावना, पृ. 5—8

5:— गुजरात एण्ड इट्स लिटरेचर, पृ. 231

6:— कवि चरित भाग—1—2, पृ. 570

7:— अखा ना छप्पा, 'कवि जीवन', पृ.—22

8:— अक्षयरस, 'निवेदन', पृ. 1—4

9:—सं. क. अ. जी. उ. हि. र. आ. अ. (अप्रकाशित) पृ. 123—26

10:— कबीर और अखा का तुलनात्मक अध्ययन, पृ. 408—422

11:— अखो एक स्वाध्याय, पृ. 130, सागर प्रकाशन ट्रस्ट, बड़ोदा द्वारा प्र.,1976

अ::— गुजराती::—

1— अखे गीता 2— अनुभव बिन्दु, 3— गुरु शिष्य संवाद 4— चित्त विचार संवाद , 5—अवस्था निरुपण, 6— पंची करण , 7— संतना लक्षण, 8— कैवल्य गीता , 9— जीवन्मुक्ति हुलास, 10, पद, भजन, कीर्तन, विष्णु प्रसाद प्रभातियां , 11— सोरठा ,12— छप्पा, 13— तिथि, 14— वार, 15— कक्का, ,16— बारमास, 17— आरती, 18— पत्र साखियों, ।

आ— हिन्दी ::—

1— संतप्रिया, 2— ब्रह्मलीला, 3— एकलक्ष रमणी, 4— अमृतकला रमेणी, 5— जकड़ी , 6— झूलण , 7—कुडलियां, 8— साखियां, 9— पद भजन, धमार।

मुक्तकात्मक — लघुकृतियों की छंद संख्याः

साखियॉं	करीब 1850
पद(भजन, कीर्तन, प्रभातियॉं, विष्णुपद, धमार)	300
झूलणा	109
छप्पा	756
सोरठा	300
कुंडलियां	25
जकड़ी	39
	3429

डॉ. आर. एन. शर्मा निम्नलिखित कृतियों को अखा की मानते है। 1—

अ::— हिन्दी रचनाएँ—

1— संत प्रिया,2— ब्रह्मलीला, 3— एक लक्ष रमैनी, 4— जकड़ी , 5— झूलणा, ,6— कुण्डलिया, 7— पद(धमार, एवं भजन सहित) 8— साखियॉं एवं 9— अमृतकला रमैणी।

1:— कबीर और अखा का तुलनात्मक अध्ययन, पृ. 408, सन् 1983 ई. , विद्या प्रेस, ब्रह्मधारी द्वारा प्रकाशित, वारणसी,

आ::— गुजराती रचनाएँ::—

1— पंचीकरण, 2— अनुभव बिन्दु, 3— चित्त विचार संवाद, 4— गुरु शिष्य संवाद, 5— कैवल्यगीता, 6— पद (विष्णु पद , भजन, पत्र, आरती, जीवन मुक्ति ,हुलास आदि) 7— सोरठा, 8— कक्का, 9— बार—मासा, बारहमासा 10— सात बार, 11— अवस्था निरुपण, 12— अखे गीता, 13— छप्पा, 14— तिथि एवं 15— साखियॉ

यहाँ अखा कृतियों का संक्षिप्त परिचय अपेक्षित है ।

गुजराती रचनाएँ::—

1 अनुभव बिन्दु::— यह कृति 'अखा वाणी ' और 'अखा कृत कथ्यो भाग —1' में प्रकाशित हुई है । इसके अलावा अन्य विद्वानों के दो—तीन स्वतंत्र संपादन भी हुये है ।

2— चित्त विचार संवाद— यह चार चरणों में 413 चौपाइयों की रचना है । 'अखानी वाणी अनें मनहर पद ' में यह प्रकाशित हुई है इसका मुख्य विषय सृष्टि रचना , प्रवृत्ति— निवृत्ति समन्वय, षडदर्शनों की समीक्षा, गुरु महात्म्य, सत्संग का महत्व, आत्म — स्वरुप का ज्ञान तथा भक्ति मुख्य है ।

3— गुरु शिष्य संवाद::— यह रचना 'अखानीं वाणी' तथा अखा कृत काव्य भाग —1 में प्रकाशित हुई है इसका रचना काल वि. सं. 1701 है । यह रचना गुरु और शिष्य के संवाद के रुप में रचित है ।

4— कैवल्य गीता— 'राग असावरी ' में 48 पंक्तियों की यह स्वतंत्र लघु कृति है। यह रचना 'अखानीं वाणी में ' प्रकाशित है ।

5—पद::— डॉ. रमण भाई पाठक ने अखा के गुजराती पदों की संख्या 200 से ऊपर दिखाई है एवं हिन्दी पदों की संख्या करीब 100 से ज्यादा गिनाई है । 1—

6— सोरठा::— यह भी ' अखानी वाणी' में संकलित है । इसकी संख्या 253 की है । यह सभी मुक्तक रचनाएँ है ।

7— कक्का::— वर्णमाला के अक्षरों को आरंभ करके लिखे गये काव्य को कक्का कहा जाता है । इसमें 'क' से क्ष' तक अक्षर लिये गये है । इसका प्रकाशन 'अप्रसिद्ध अक्षयवाणी ' में है ।

8— बारह मासा::— इस कृति में बारह महीनों की गणना कार्तिक से प्रारंभ करके आश्विन मास तक मानी गई है । यह रचना भी अप्रसिद्ध अक्षयवाणी में प्रकाशित हुई है । इसका मुख्य विषय अद्वैत ,ज्ञान , वैराज्ञ , चेतावनी, गुरु सेवा आदि है ।

9— सात चार::— यह रचना भी 'अप्रसिद्ध अक्षयवाणी' में प्रकाशित है । इसमें वारों का प्रारंभ गुरुवार से किया गया है ।

10— तिथि— यह रचना डॉ. रमण भाई कृत 'अखो' एक स्वध्याय' में प्रकाशित है तथा इसका वर्ण्य विषय सत्संग —महात्म्य, तथा अद्वैत ज्ञानोपदेश है ।

11— अवस्था निरुपण::— यह रचना 'अप्रसिद्ध अक्षय वाणी' में प्रकाशित है । कुल मिलकर 40 चौपाइयों की यह कृति है ।

12— अखे गीता::— अखा की गुजराती रचनाओं में यह श्रेष्ठ रचना मानी जाती है । 'अखानीं वाणी' एवं 'अखा कृत काव्य भाग एक ' में प्रकाशित है । इसके अलावा अन्य विद्वानों ने इसका स्वतंत्र प्रकाशन भी किया है ।

13 छप्पा::— यह रचना गुजरात में इस प्रकार प्रसिद्ध है जिस प्रकार उत्तर भारत में मानस ' की चौपाइयॉ एवं कबीर और रहीम के दोहे । श्री उमाशंकर

1:— अखो एक स्वाध्याय, सागर प्रकाशन ट्रष्ट, बड़ोदा द्वारा प्रकाशित, पृ. 105, सन् 1976 ई.

जोशी का मानना है कि " छप्पा'की संज्ञा स्वयं कवि द्वारा नहीं वरन किसी अन्य द्वारा की गई है । 1–

14– पंची करण::– 'अखानी वाणी' और अखा कृत काव्य भाग–1 ' में यह रचना प्रकाशित है । चार –चारणी 102 चौपाइयों की यह एक लघु कृति है ।

–हिन्दी रचनाएँ–

1– संत प्रिया::– इस कृति को देव नागरी लिपि में सर्वप्रथम प्रकाशित करने का श्रेय 'कुंवर चन्द्र प्रकाश सिंह ' को है । उन्होंने 'अक्षयरस ' के निवेदन में इसकी छंद संख्या 138 बतलाई है । 2 इसका मुख्य वण्य विषयक ब्रह्म का स्वरुप ,गुरु का महत्व , कंचन –कामिनी की निन्दा आदि है

2– ब्रह्मलीलाा ::– डॉ. रमण भाई पाठक का मानना है कि अपने समकालीन सगुण भक्तों के लीला काव्यों से प्रभावित होकर अखा ने इस कृति की रचना की । 3–

3–एक लक्ष्य रमणी::– कुल 27 साखियों की ' अक्षय रस ' में संपादित यह एक लघु रचना है ।

4–जकड़ी::– इसका प्रकाशन भी 'अक्षय रस' में कुंवर चन्द्र प्रकाश सिंह ने किया है , इसमें अखा की 39 जकड़ियाँ है ।

5– झूलना::– 'अक्षयरस' एवं अप्रसिद्ध अक्षय वाणी' में कुल 25 कुंडलियाँ प्रकाशित हुई है । इसका मुख्य वर्ण्य विषय गुरु महात्म्य, ब्रह्म संबंधी ज्ञान , परमात्मा के प्रति प्रेम, विरह वैराग्य आदि है ।

6– अमृत कला रमैणी::– यह 27 साखियों की लघु रचना है । यह कृति गुजरात साहित्य सभा ,बम्बई की पाण्डुलिपि संख्या 394 में उपलब्ध है ।

1:– अखाना छप्पा (द्वि. सं.) अखानी आतम सूझ, पृ. 39

2:– अक्षरस, 'निवेदन' म. स. वि. बड़ौदा द्वारा प्रकाशित, सन् 1963 ई.

3:– अखो एक स्वाध्याय, पृ.–129, सागर प्रकाशन ट्रष्ट, बड़ौदा द्वारा प्रकाशित, सन् 1976 ई.

7– कुडलियाँ:– 'अक्षयरस' एवं 'अप्रसिद्ध अक्षय वाणी' में अखा की गुजराती तथा हिन्दी में कुल 25 कुंडलियाँ प्रकाशित हुई है । इस कृति का वर्ण्य–विषय गुरु– महात्म्य, ब्रह्म संबंधी ज्ञान, अहंकार–त्याग, विरह, परमात्मा के प्रति प्रेम वैराग्य आदि है ।

9– साखियाँ– हिन्दी एवं गुजराती दोनों भाषाओं में अखा की साखियाँ उपलब्ध है । इसका प्रथम प्रकाशन श्री केशवलाल ठक्कर द्वारा संपादित 'अखा जी साखियों' नाम से सं. 2008 वि. में हुआ ।